





# भगवान् महावीर

के

## श्रावक दस

मम्यक्त्तु सहित अणुत्रतों को धारण करने वाला, प्रति दिन पञ्च महात्रतधारी साधुओं के पाम शास्त्र श्रवण करने वाला श्रावक कहलाता है। अथवा—

श्रद्धालुता श्रानि शृणोति शासन।

दान उपेदाशु वृणोति दर्शनम् ॥

कन्तत्यपुण्यानि करोति मयम।

त श्रावक प्राहुरमी विचक्षणाः ॥

अर्थात्— वीतराग प्ररूपित तत्त्वों पर दृढ श्रद्धा रखने वाला, जिनवाणी को सुनने वाला, पुण्य मार्ग में द्रव्य का व्यय करने वाला, मम्यग्दर्शन को धारण करने वाला, पाप को छेदन करने वाला देशप्रिरति श्रावक कहलाता है। भगवान् महावीर स्वामी के मुख्य श्रावक दस हुए हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं—

(१) आनन्द (२) कामदेव (३) चुलनीपिता (४) सुरादेव (५) चुल्लशतरु (६) कृण्डकोलिक (७) सहालपुत्र (सकडालपुत्र)

( ८ ) महाशतक ( ६ ) नन्दिनीपिता ( १० ) मालिहिपिया (शालेयिका पिता) । इन मन्त्र का वर्णन उपामकदशाग सूत्र में है । उसके अनुमार यहाँ दिया जाता है ।

( १ ) आनन्द श्रावक— इस जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में भारतभूमि का भूपणरूप वाणिज्य नाम का एक ग्राम था । वहाँ जितशत्रु राजा राज्य करता था । उसी नगर में आनन्द नाम का एक सेठ रहता था । कुचेर के ममान वह ऋद्धि सम्पत्तिशाली था । नगर में वह मान्य एवं प्रतिष्ठित सेठ था । प्रत्येक कार्य में लोग उसकी सलाह लिया करते थे । शीलसदाचारादि गुणों से सुशोभित शिवानन्दा नाम की उसकी पत्नी थी । आनन्द के पास चार करोड़ (कोटि) सोनैया निधानरूप अर्थात् खजाने में था, चार करोड़ सोनैय का विस्तार (द्विपद, चतुष्पद, धन, धान्य आदि की सम्पत्ति) था और चार करोड़ सोनैये से व्यापार किया जाता था । गायों के चार गोबुल (एक गोबुल में दस हजार गायें होती हैं) थे । वह धर्मिष्ठ और न्याय से व्यापार चलाने वाला तथा सत्यवादी था । । इसलिए राजा भी उसका बहुत मान करता था । उसके पाँच सौ गाँव व्यापार के लिए विदेश में फिरते रहते थे और पाँच सौ घाम बर्गरह लाने के लिए नियुक्त किये हुए थे । समुद्र में व्यापार करने के लिए चार बड़े जहाज थे । इस ऋद्धि से सम्पन्न आनन्द श्रावक अपनी पत्नी शिवानन्दा के साथ आनन्द पूर्वक जीवन व्यतीत करता था ।

एक समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वाणिज्य ग्राम के बाहर उद्यान में पधारें । देवताओं ने भगवान् के समनमरण की रचना की । भगवान् के पधारने की सूचना मिलते ही जनता बन्दना कलिये गई । जितशत्रु राजा भी बड़ी धूमधाम और उत्साह के साथ भगवान् को बन्दना करने के लिये गया । खबर पाने पर आनन्द

इस प्रकार विचार करने लगा कि अहो ! आज मेरा सद्भाग्य है । भगवान् का नाम ही पवित्र एवं कल्याणकारी है तो उनके दर्शन का तो रहना ही क्या ? ऐसा विचार कर उसने शीघ्र ही स्नान, क्रिया, सभा में जाने योग्य शुद्ध वस्त्र पहने, अल्प भार और बहुमूल्य वाले आभूषण पहने । वाणिज्य ग्राम के बीच में से होता हुआ आनन्द मेठ धुतिपलाश उद्यान में, जहाँ भगवान् विराजमान थे, आया । तिक्खुत्तो के पाठ से वन्दना नमस्कार कर बैठ गया । भगवान् ने धर्मोपदेश फरमाया । धर्मोपदेश सुन कर जनता वापिस चली गई किन्तु आनन्द वहीं पर बैठा रहा । हाथ जोड़ कर विनय पूर्वक भगवान् से अर्ज करने लगा कि हे भगवन ! ये 'निर्ग्रन्थ प्रवचन मुझे विशेष रुचिकर हुए हैं । आपके पास जिस तरह बहुत से राजा, महाराजा, सेठ, मेनापति, तलवार, कौडम्बिक, माडम्बिक, सार्थवाह आदि प्रज्या अङ्गीकार करते हैं उस तरह प्रज्या ग्रहण करने में तो मैं असमर्थ हूँ । मैं आपके पास श्रावक के व्रत अङ्गीकार करना चाहता हूँ । भगवान् ने फरमाया कि जिस तरह तुम्हें सुख हो वैसे कार्य करो किन्तु धर्म कार्य में विलम्ब मत करो ।

इसके बाद आनन्द गाथापति ने श्रमण भगवान् महावीर के पास निम्न प्रकार से व्रत अङ्गीकार किए ।

दो करण तीन योग से स्थूल प्राणातिपात, स्थूल मृषावाद, स्थूल अदत्तादान का त्याग किया । चौथे व्रत में स्वदार सतोष व्रत की मर्यादा की और एक शिवानन्दा भार्या के सिवाय बाकी दूसरी मन स्त्रियों के साथ मैथुन का त्याग किया । पाँचवें व्रत में धन, धान्यादि की मर्यादा की । बारह करोड़ मीनेया, गायों के चार गोवृल, पाँच सौ हल और पाँच सौ हला से जोती जाने वाली भूमि, हजार गाड़े और चार बड़े जहाज के उपरान्त

परिग्रह रखन का नियम लिया। रात्रिभोजन का त्याग किया।

सातवें व्रत में उपभोग परिभोग भी मर्यादा की जाती है। एक ही बार भोग करने योग्य भोजन, पानी आदि पदार्थ उपभोग कहलाते हैं। बारम्बार भोगे जाने वाले रत्न, आभूषण और स्त्री आदि पदार्थ परिभोग कहलाते हैं। इन दोनों का परिमाण नियत करना उपभोग परिमाण व्रत कहलाता है। यह व्रत दो प्रकार का है एक भोजन में और दूसरा कर्म में।

उपभोग करने योग्य भोजन और पानी आदि पदार्थों का तथा परिभोग करने योग्य पदार्थों का परिमाण निश्चित करना अर्थात् अमुक अमुक वस्तु को ही मैं अपने उपभोग परिभोग में लूँगा, इन से भिन्न पदार्थों को नहीं, ऐसी संज्ञा नियत करना भोजन से उपभोग परिभोग व्रत है। उपरोक्त पदार्थों की प्राप्ति के लिए उद्योग धन्यों का परिमाण करना अर्थात् अमुक अमुक उद्योग धन्यों से ही मैं इन वस्तुओं का उपार्जन करूँगा दूसरों कायों से नहीं, यह कर्म से उपभोग परिभोग व्रत कहलाता है। आनन्द श्रावक ने निम्न प्रकार से मर्यादा की—

- (१) उल्लिखितानिहि—स्नान करने के पश्चात् शरीर को पोंछने के लिए गमद्धा (डुमाल) आदि की मर्यादा करना। आनन्द श्रावक ने गन्धकापायित (गन्ध प्रधान लाल वस्त्र) का नियम किया था।
- (२) दन्तवर्णनिहि—दाँत साफ करने के लिए दाँतुन का परिमाण करना। आनन्द श्रावक ने हरी मुलहटी का नियम किया था।
- (३) फलविहि—स्नान करने के पहले शिर धाने के लिए आवला आदि फलों की मर्यादा करना। आनन्द श्रावक ने जिसमें गुठली उत्पन्न न हुई हो ऐसी आवलों का नियम किया था।
- (४) अन्धमण्डलनिहि—शरीर पर मालिश करने योग्य तेल आदि का परिमाण निश्चित करना। आनन्द श्रावक ने शतपाक (सौ

औषधियाँ डाल कर बनाया हुआ) और नहस्रपाक (हजार औषधियाँ डाल कर बनाया हुआ) तेल रखा था ।

(५) उब्बट्टणविहि—शरीर पर लगाए हुए तेल को सुखाने के लिए पीठी आदि की मर्यादा करना । आनन्द श्रावक ने कमलों के पराग आदि से सुगन्धित पदार्थ का परिमाण किया था ।

(६) मज्जणविहि—स्नानों की संख्या तथा स्नान करने के लिए जल का परिमाण करना । आनन्द श्रावक ने स्नान के लिए आठ घड़े जल का परिमाण किया था ।

(७) वत्थविहि—पहनने योग्य वस्त्रों की मर्यादा करना । आनन्द श्रावक ने कपाम से रने हुए दो वस्त्रों का नियम किया था ।

(८) विलेपणविहि—स्नान करने के पश्चात् शरीर में लेपन करने योग्य चन्दन, केशर आदि सुगन्धित द्रव्यों का परिमाण निश्चित करना । आनन्द श्रावक ने अगुरु (एक प्रकार का सुगन्धित द्रव्य विशेष), कुकुम, चन्दन आदि द्रव्यों की मर्यादा की थी ।

(९) पुष्पविहि—फूलमाला आदि का परिमाण करना । आनन्द श्रावक ने शुद्ध कमल और मालती के फूलों की माला पहनने की मर्यादा की थी ।

(१०) आभरणविहि—गहने, जैवर आदि का परिमाण करना । आनन्द श्रावक ने कानों के रजत कुण्डल और स्वनामाङ्कित (जिम पर अपना नाम खुदा हुआ हो ऐसी) मुद्रिका अगूठी धारण करने का परिमाण किया था ।

(११) धूवविहि—धूप देने योग्य पदार्थों का परिमाण करना । आनन्द श्रावक ने अग्रर और लोमान आदि का परिमाण किया था ।

(१२) भोयणविहि—भोजन का परिमाण करना ।

(१३) पेज्जविहि—पीने योग्य पदार्थों की मर्यादा करना । आनन्द श्रावक ने भूँग की दाल और घी में भुने हुए चावलों

की रात की मर्यादा की थी ।

( १४ ) भक्षणविधि—खाने के लिए पक्वान्न की मर्यादा करना । आनन्द श्रावक ने घृतपूर (घेवर) और खाड से लिप्त खापे का परिमाण किया था ।

( १५ ) शोदनविधि—सुधा निवृत्ति के लिए चावल आदि की मर्यादा करना । आनन्द श्रावक ने कमोद चावल का परिमाण किया था ।

( १६ ) स्रवविधि—दाल का परिमाण करना । आनन्द श्रावक ने मटर, मूँग और उडद की दाल का परिमाण किया था ।

( १७ ) घय विधि—घृत का परिमाण करना । आनन्द श्रावक ने गायों के शरद ऋतु में उत्पन्न घी का नियम किया था ।

( १८ ) मागविधि—शाक भानी का परिमाण निश्चित करना । आनन्द श्रावक ने बधुआ, चूचू (सुत्थिय) और मण्डुकी शाक का परिमाण किया था । चूचू और मण्डुकी उस समय में प्रसिद्ध कोई शाक विशेष हैं ।

( १९ ) माहुरयविधि—पके हुए फलों का परिमाण करना । आनन्द श्रावक ने पालङ्ग (पेल फल) फल का परिमाण किया था ।

( २० ) जेमणविधि—बड़ा, पकौड़ी आदि खाने योग्य पदार्थों का परिमाण निश्चित करना । आनन्द श्रावक ने तेल आदि में तलने के रात छात्र, दही और काजी आदि सड़ी चीजों में भिगोय हुए मूँग आदि की दाल में रने हुए बड़े और पकौड़ी आदि का परिमाण किया था । आज कल इमी को दही बड़ा, राजी बड़ा और दालिया आदि कहते हैं ।

( २१ ) पाणियविधि—पीन के लिए पानी की मर्यादा करना । आनन्द श्रावक ने आकाश में गिरे हुए और तत्काल (टाकी आदि में) ग्रहण किए जल की मर्यादा की थी ।

( २२ ) मुहमासविहि- अपने मुख को सुगन्धित करने के लिए पान और चूर्ण आदि पदार्थों का परिमाण करना । आनन्द श्रावक ने पञ्चसौगन्धिक अर्थात् लौंग, कपूर, रुक्मोल (शीतल चीनी), जायफल और इलायची डाले हुए पान का परिमाण किया था ।

इस के बाद आनन्द श्रावक ने आठवें अनर्थ दण्ड प्रत को अंगीकार करते समय नीचे लिखे चार कारणों से होने वाले अनर्थ दण्ड का त्याग किया—(क) अपध्यानाचरित—आर्चध्यान या रौद्रध्यान के द्वारा अर्थात् दूसरे को नुस्मान पहुँचाने की भावना या शोक चिन्ता आदि के कारण व्यर्थ पाप कर्मों की बाँधना । (ख) प्रमादाचरित—प्रमाद अर्थात् आलस्य या अमावधानी से अथवा मद्य, विषय, रूपायादि प्रमादों द्वारा अनर्थ दण्ड का भेदन करना । (ग) हिंस्रप्रदान—हिंसा करने वाले शस्त्र आदि दूसरे को देना । (घ) पापकर्मोपदेश—निम्न में पाप लगता हो ऐसे कार्य का उपदेश देना ।

इसके बाद भगवान् ने आनन्द श्रावक से कहा कि हे आनन्द ! जीवानीवादि नौ तत्त्वों के ज्ञाता श्रावक को ममकित के पाँच अतिचारों को, जो कि पाताल कलश के समान हैं, जानना चाहिए किन्तु इनका भेदन नहीं करना चाहिए । वे अतिचार ये हैं—सका, कंसा, वितिगिच्छा, परपामंडप्पसंसा, परपामंडसधवो । इन पाँच अतिचारों की विस्तृत व्याख्या इसके प्रथम भाग शील नं० २८५ में दे दी गई है ।

इसके बाद बारह प्रता के साथ अतिचार बतलाए । उपासक दशाङ्ग सूत्र के अनुसार उन अतिचारों का मूल पाठ यहाँ दिया जाता है—

(१) तयाणन्तरं च ख धूलगस्स पाणाइवायनेरमणस्स ममणो-  
वासणं पञ्च अइयारा पेयाला जाणियेव्वा न समायरियव्वा,



तजहा- वन्धे वहै छविच्छेप अइभारे भक्तपाणवोच्छेए । (२) तयाणन्तर च खं वूलगस्म मुमावाय बेरमणस्म पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तजहा-सहमाअन्मकपाणे रहमा-अभकपाणे सदारमन्तभेए मोमोयण्मे कूडलेहकरणे । (३) तयाणन्तरं च ख वूलगस्म अदिएणादाण बेरमणस्म पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तजहा- तेगाहडे तकरप्पओगे निरुद्धरज्जाइक्कमे कूडतुलकूडमाणे तप्पडिरूपगवहारै । (४) तयाणन्तर च ख मदारमन्तोमिए पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तजहा- इत्तरियपरिग्गहियागमणे अपरिग्गहियागमणे अण्णकीड़ा परनिनाहकरणे राममोगतिव्वाभिलासे । (५) तयाणन्तर च खं इन्धापरिमाणस्म ममणोनामण्णं पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तजहा खेत्तन्नुपमाणाइक्कमे हिरणसुणणपमाणाइक्कमे दुपयचउप्पयपमाणाइक्कमे धणधन्पमाणाइक्कमे वुवियपमाणाइक्कमे । (६) तयाणन्तर च ख दिसि-वयस्म पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तजहा- उड्ढदिमिपमाणाइक्कमे अहोदिमिपमाणाइक्कमे, तिरियदिमि-पमाणाइक्कमे खेत्तनुड्ढी मडअन्तरद्दा । (७) तयाणन्तरं च खं उअभोगपरिभोग दुविहं पण्णत्ते, तजहा- भोयणओ व कम्मओ य, तत्थ ख भोयणओ समणासण्णं पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तजहा- मचित्ताहारे मचित्तपडियद्दाहारे अप्पउलि-ओमहिभक्खणया दुप्पउलिओसहिभक्खणया तुन्धोमहिभक्खणया कम्मओ ख ममणोनासण्ण पणरमः कम्मादाणाइ जाणियव्वाइ न समायरियव्वाटं, तजहा- इह्वालकम्मे वणकम्मे साडीक-म्मे भाडीकम्मे फीडीकम्मे दन्तवाणज्जे लक्खवाणज्जे रसवाण-ज्जे निमवाणज्जे केसवाणज्जे वन्तपीलणकम्मे निद्धच्छणकम्मे

द्वग्निदापणया सरदहत्तलायसीसणया असईजणपोसणया ।  
 (८) तयाणन्तरं च ण अणट्ठादण्डवेरमणस्स समणोवासएणं  
 पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तजहा—कन्दप्पे  
 कुक्कुइए मोहारण मञ्जुत्ताहिगरणे उवमोगपरिभोगाडरिचे ।  
 (९) तयाणन्तरं च ण सामाइयस्म समणोवासएण पञ्च अइयारा  
 जाणियव्वा न समायरियव्वा, तजहा—मणदुप्पणिहाणे वयदुप्पणि-  
 हाणे कायदुप्पणिहाणे ममाइयस्म मइअरुणया सामाइयस्स  
 अणवट्ठियस्स करणया । (१०) तयाणन्तरं च ण देमावगासि-  
 यस्म समणोवासएण पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरि-  
 यव्वा, तजहा—आणवणप्पओगे पेसवणप्पओगे सदाणुवाए रुवा-  
 णुवाए बहिया पोगालपक्खेदे । (११) तयाणन्तरं च ण पोसहोववा-  
 मस्म समणोवासएणं पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा,  
 तजहा—अप्पडिलेहियदुप्पडिलेहियमिज्जामथारे अप्पमज्जियदुप्प-  
 मज्जियमिज्जामथारे अप्पडिलेहियदुप्पडिलेहिय उच्चारपासवण-  
 भूमी अप्पमज्जियदुप्पमज्जिय उच्चार पामवणभूमी पोसहोवासस्स  
 सम्म अणणुपल्लणया । (१२) तयाणन्तरं च णं अहासविभागस्स  
 समणोवासएण पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा तजहा  
 सच्चि निम्मेवणया सच्चि पिहणया कालाइक्खमे परववदेसे  
 मच्छरिया । तयाणन्तरं च ण अपच्छिम मारणन्तिय सलेहणा भूम-  
 याराहणए पञ्च अइयारा जाणियव्वा न समायरियव्वा, तजहा—  
 इहलोगामसप्पओगे परलोगाससप्पओगे जीवियामसप्पओगे  
 मरणाससप्पओगे कामभोगाससप्पओगे ।

धरंहे व्रतों के ६० अतिचारों की व्याख्या इसके प्रथम भाग  
 बोल न० ३०१ से ३१२ तक में और सलेखना के पाँच अति-  
 चारों की व्याख्या बोल न० ३१३ में दे दी गई है ।

भगवान् के पास श्रावक के व्रत स्वीकार कर आनन्द

श्रावण ने भगवान् को वन्दना नमस्कार किया और इस प्रकार अर्ज करने लगा कि हे भगवान् ! मैंने आपके पास अन्न शुद्ध सम्यक्त्व धारण की है इसलिए मुझे अन्न निम्न लिखित कार्य करने नहीं रूपते—अन्यतीर्थिक, अन्यतीर्थियों के माने हुए, देव, माधु आदि को वन्दना नमस्कार करना, उनके बिना मुलाये पहिले अपनी तर्फ से भोजना, आलाप संलाप करना और गुरुबुद्धि में उन्हें अशन पान आदि देना । यहाँ पर जो अशनादि दान का निषेध किया गया है, सो गुरुबुद्धि की अपेक्षा से है अर्थात् सम्यक्त्व धारी पुरुष अन्यतीर्थिकों (अन्य मतानुलम्बियों) द्वारा माने हुए गुरु आदि का एकान्त, निर्जरा के लिए अशनादि नहीं देता । इस का अर्थ वरुणा दान (अनुरूम्पा दान) का निषेध नहीं है, क्योंकि विपत्ति में पड़े हुए दीन दुखी प्राणियों पर वरुणा (अनुरूम्पा) करके दान आदि के द्वारा, उनकी सहायता करना अधिक अपना कर्तव्य समझता है ।

सम्यक्त्वधारी पुरुष अन्यतीर्थिकों द्वारा पूजित देव आदि को वन्दना नमस्कार आदि नहीं करता यह उत्सर्ग मार्ग है । अपनाद मार्ग में इस विषय के ६ आगार कहे गये हैं—

(१) राजाभियोग (२) गणाभियोग (३) यलाभियोग (४) देवाभियोग (५) गुरुनिग्रह (६) वृत्तिकान्तार ।

इन छ आगारों की विशेष व्याख्या इसके दूसरे भाग के छठे बोल संग्रह के बोल नं० ४५५ में दी गई है ।

आनन्द श्रावण ने भगवान् से फिर अर्ज किया कि हे भगवान् ! श्रमण निर्ग्रन्थों को प्रासुक और एषणीय आहार, पानी, वस्त्र, पात्रादि देना मुझे रूपता है । तत्पश्चात् आनन्द श्रावण ने बहुत से प्रश्नोत्तर किये, और भगवान् को वन्दना नमस्कार कर वापिस

\* इस विषय में मूल पाठ का स्पष्टीकरण परिशिष्ट में किया जाएगा ।

अपने घर आगया । घर आकर अपनी धर्मपत्नी शिवानन्दा से कहने लगा कि हे देवानुप्रिये ! मैंने आज श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के पास श्रावक के व्रत अङ्गीकार किये हैं । तुम भी जाओ और भगवान् को उन्दना नमस्कार कर श्राविका के व्रत अङ्गीकार करो । शिवानन्दा ने अपने स्वामी के कथनानुसार भगवान् के पास जाकर व्रत अङ्गीकार किये और श्रमणोपायिका रनी ।

श्री-गौतम स्वामी के पूछने पर भगवान् ने फरमाया कि आनन्द, श्रावक मेरे पास दीक्षा नहीं लेगा किन्तु बहुत र्पों तक श्रावक धर्म का पालन कर मौधर्म देवलोक के अरुण विमान में चार पल्योपम की स्थिति वाले देव रूप से उत्पन्न होगा ।

आनन्द श्रावक अपनी पत्नी शिवानन्दा भार्या सहित श्रमण निर्ग्रन्थों की सेवा भक्ति करता हुआ आनन्द पूर्वक जीवन व्यतीत करने लगा । एक समय आनन्द श्रावक ने विचार किया कि मैं भगवान् के पास दीक्षा लेने में तो असमर्थ हूँ किन्तु अब मेरे लिए यह उचित है कि ज्येष्ठ पुत्र को घर का भार सम्भला कर एकान्त रूप से धर्मध्यान में समग्र प्रितगऊँ । तदनुसार प्रातः काल अपने परिवार के सब पुरुषों के सामने ज्येष्ठ पुत्र को घर का भार सम्भला कर आनन्द श्रावक ने पीपय गाला में आकर दर्म संस्तारक विद्याया और उम पर बैठ कर धर्मा-राधन करने लगा । इसके पश्चात् आनन्द श्रावक ने श्रावक की ग्यारह पडिमा \* धारण की और उनका सूत्रानुसार सम्यक् प्रकार से आराधन किया ।

इस प्रकार उग्र तप करने से आनन्द श्रावक का शरीर बहुत कृश (दुबला) होगया । तब आनन्द श्रावक ने विचार किया

\* श्रावक का ग्यारह पडिमाओ का स्वरूप ग्यारहवें प्रोक्त समग्र म दिया जायगा ।

कि जब तक मेरे शरीर में उत्थान, र्भ, उल, वीर्य्य, पुरुपाकार, परा-  
क्रम हैं और जब तक प्रमग भगवान् महावीर स्वामी गंधहस्ती की  
तरह विचर रहे हैं तब तब मुझे मलेगना मयारा कर लेना  
चाहिए। इस प्रकार आनन्द थावरु मलेगना सथारा कर धर्म  
ध्यान में ममय विताने लगा। परिणामों की विशुद्धता के कारण  
और ज्ञानावरणीयादि कर्मों का चयोपशम होने से आनन्द  
श्रावक को अधिज्ञान उत्पन्न होगया। जिससे पूर्व, पश्चिम  
और दक्षिण दिशा में लक्षण समुद्र में पाँच माँ योजन तक और  
उत्तर में चुल्ल हिमवान् पर्वत तक देखने लगा। ऊपर माँधर्म  
देवलोक और नीचे म्लप्रमा पृथ्वी के लोलुयच्युत नामक  
नरकागाम को, जहाँ चौरामी हनार वर्ष की स्थिति वाले नैर्-  
यिक रहते हैं, जानने और देखने लगा।

इसी समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ग्रामानुग्राम विहार  
करते हुए वहाँ पधार गये। उनके ज्येष्ठ शिष्य इन्द्रभृति अनगार  
(गाँतम स्वामी) नेले नेले पारणा करते हुए उनकी सेवा में रहते  
थे। नेले के पारण के दिन पहले पहर में स्वाध्याय, दूसरे पहर  
में ध्यान करके तीसरे पहर में चञ्चलता एवं शीघ्रता रहित  
मय में प्रथम मुखवस्त्रिमा की और बाद में वस्त्र, पात्र  
आदि की पडिलेहणा की। तपश्चात् भगवान् की आज्ञा  
लकर प्राणिज्य ग्राम में गोचरी के लिए पधारे। उँच नीच  
मध्यम बुल म मामुदानिक भिक्षा करके वापिस लौट रहे थे।  
उस समय बहुत से मनुष्यों से ऐसा सुना कि आनन्द श्रावक  
पौषध शाला में सलेखना मयारा करके धर्मध्यान करता हुआ  
विचरता है। गाँतम स्वामी आनन्द श्रावक को देखने के लिए  
उहाँ गये। गाँतम स्वामी क दर्शन कर आनन्द थावरु अति  
प्रमन्न हुआ और अर्ज की कि हे भगवन् ! मेरी उठने की शक्ति

नहीं है। यदि कृपा कर आप कुछ नजदीक पधारें तो मैं मस्तक में आपके चरण स्पर्श करूँ। गौतम स्वामी के नजदीक पधारने पर आनन्द ने उनके चरण स्पर्श किये और निवेदन किया कि मुझे अधिज्ञान उत्पन्न हुआ है जिसमें मैं लवण समुद्र में पाँच मीं योजन यात्रा नीचे लोलुपच्युत नरकावाम की जानता और देखता हूँ। यह सुन कर गौतम स्वामी ने कहा कि श्रावण को इतने विस्तार वाला अधिज्ञान नहीं हो सकता। इसलिये हे आनन्द ! तुम इस बात के लिए दण्ड प्रायश्चित्त लो। तब आनन्द श्रावण ने कहा कि हे भगवन् ! क्या सत्य बात के लिए भी दण्ड प्रायश्चित्त लिया जाता है ? गौतम स्वामी ने कहा— नहीं। आनन्द श्रावण ने कहा हे भगवन् ! तब तो आप मय दण्ड प्रायश्चित्त लीजियेगा। आनन्द श्रावण के इस कथन को सुन कर गौतम स्वामी के हृदय में शफा उ पन्न हो गई। अतः भगवान् के पास आकर सारा वृत्तान्त कहा। तब भगवान् ने कहा कि हे गौतम ! आनन्द श्रावण का कथन सत्य है इसलिए वापिस जाकर आनन्द श्रावण से क्षमा मागो और इस बात का दण्ड प्रायश्चित्त लो। भगवान् के कथनानुसार गौतम स्वामी ने आनन्द श्रावण के पास जाकर क्षमा मागी और दण्ड प्रायश्चित्त लिया।

आनन्द श्रावण ने बीस वर्ष तक श्रमखोपासक पर्याय का पालन किया अर्थात् श्रावण के व्रता का भली प्रकार पालन किया। साठ भक्त अनगन पूर्वक अर्थात् एक महीने का मूलेखना मथारा करके समाधि मरण से मर कर माधर्म देवलोक के अरुण विमान में देव रूप से उत्पन्न हुआ। वहाँ चार पण्योपम की स्थिति पूर्ण करके महाविदेह क्षेत्र में उत्पन्न होगा और उसी भव में मोक्ष प्राप्त करेगा।

( २ ) कामदेव श्रावण— चम्पा नगरी में जितशत्रु राजा राज्य

करता था। नगरी के अन्दर कामदेव नामक एक गाथापति रहता था। उसकी बर्मपत्नी का नाम भद्रा था। कामदेव के पास बहुत धन था। छ करोड़ मोनैये उसके राजाने में थे। छ करोड़ व्यापार में लगे हुए थे और छ करोड़ सौनैये प्रविस्तार (घर का सामान, द्विपद, चतुष्पद आदि) में लगे थे। गाथा के छ गोकुल थे जिस में साठ हजार गाथें थीं। इस प्रकार वह बहुत अद्विमम्पन्न था। आनन्द श्रावक की तरह वह भी नगर में प्रतिष्ठित एवं राजा और प्रजा सभी के लिए मान्य था।

एक समय शमशु भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पधार। कामदेव भगवान् के दर्शन करने के लिए गया। आनन्द श्रावक की तरह कामदेव ने भी श्रावक के व्रत अङ्गीकार किए और धर्मध्यान करता हुआ निचरने लगा। एक दिन वह पाँपघशाला में पाँपघ करके धर्मध्यान में लगा हुआ था। अर्द्ध रात्रि के समय एक मिथ्यादृष्टि देव कामदेव श्रावक के पास आया। उस देव ने एक महान् पिशाच का रूप बनाया। उसने आँसू, कान, नाक, हाथ, जघा आदि ऐसे निशाल, विकृत और भयङ्कर रनाये कि देखने वाला भयभीत हो जाय। मुँह फाड़ रखा था। जीभ बाहर निकाल रखी थी। गले में गिरगट (किरमाटिया) की माला पहन रखी थी। चूहों की माला बना कर कन्धों पर टाल रखी थी। कानों में गहनों की तरह नेत्रले (नालिया) पहने हुआ था। मणों की माला से उसने अपना वक्षस्थल (छाती) सजा रखा था। हाथ में तलवार लेकर वह पिशाच रूप धारी देव पाँपघशाला में बैठे हुए कामदेव के पास आया। अति कुपित होता हुआ और दातो को फिटफिटता हुआ बोला हे कामदेव! अप्रार्थिक का प्रार्थिक (जिमकी कोई इच्छा नहीं करता ऐसी मृत्यु की इच्छा करने वाला), हो (लज्जा), श्री

(क्रान्ति), धृति (धीरज) और कीर्ति से रहित, तूँ धर्म, पुण्य, स्वर्ग और मोक्ष की अभिलाषा रखता है। इसलिए हे कामदेव ! तुझे शीलव्रत, गुणव्रत, निरमण्यव्रत तथा पञ्चकलाण, पौषधोपवास आदि से विचलित होकर उन्हें सखिदत्त करना और छोड़ना नहीं कल्पता हूँ किन्तु मैं तुझे इनसे विचलित करूँगा। यदि तूँ इनमें विचलित नहीं होगा तो इस तलवार की तीक्ष्ण धार से तेरे शरीर के टुकड़े टुकड़े कर दूँगा जिससे आर्च ध्यान करता हुआ अकाल में ही जीवन से अलग कर दिया जायगा। पिशाच के ये शब्द सुन कर कामदेव श्रावक को किसी प्रकार का भय, त्रास, उद्वेग, लोभ, चञ्चलता और मम्भ्रम न हुआ किन्तु वह निर्भय होकर धर्मध्यान में स्थिर रहा। पिशाच ने दूसरी बार और तीसरी बार भी ऐसा ही कहा किन्तु कामदेव श्रावक क्रिश्चिन्मात्र भी विचलित न हुआ। उसे अविचलित देख कर वह पिशाच तलवार में कामदेव के शरीर के टुकड़े टुकड़े करने लगा। कामदेव इस असह्य और तीव्र वेदना को समभाव पूर्वक सहन करता रहा। कामदेव को निर्ग्रन्थ प्रयत्नों में अविचलित देख कर वह पिशाच अति कुपित होकर उसे क्रोसता हुआ पौषधशाला से बाहर निकला। पिशाच का रूप छोड़ कर उसने एक भयङ्कर और मदोन्मत्त हाथी का रूप धारण किया। पौषधशाला में आकर कामदेव श्रावक को अपनी सूँड में उठाकर ऊपर आकाश में फेंक दिया। आकाश में बाधिम गिरते हुए कामदेव को अपने तीखे दाँतों पर भैल लिया। फिर जमीन पर पटक कर पैरों से तीन बार रोदा (ममला)। इस असह्य वेदना को भी कामदेव ने सहन किया। वह जब जग भी विचलित न हुआ तब पिशाच ने एक भयङ्कर महाकाय सर्प का रूप धारण किया। सर्प बन कर वह कामदेव के शरीर पर चढ़ गया। गर्दन को तीन घेरों से लपेट कर



जाती में डक मारा । इतो पर भी कामदेव निर्भय होकर धर्म-  
 ध्यान में दृढ़ रहा । उमर पगिगामा में जरा भी कम नहीं  
 आया । तब वह पिशाच हार गया, दुग्धी तथा रज्जुत गिञ्ज दृष्टा ।  
 धीरे धीरे पीछे लौट कर पौषधशाला में वाहन निरुत्था । मरु  
 के रूप को छोड़ कर अपना अमला देव का दिव्य रूप धारण  
 किया । पौषधशाला में आकर कामदेव श्रावक में इस प्रकार  
 रहने लगा—अहो कामदेव श्रमणोपामक ! तुम धन्य हो, कृत पुण्य  
 हो, तुम्हारा जन्म मफल है । निर्ग्रन्थ प्रवचनों में तुम्हारी दृढ़  
 श्रद्धा और भक्ति है । हे देवानुप्रिय ! एक समय शक्रेन्द्र ने अपने  
 सिंहासन पर बैठ कर चांगमी हजार मामानिक देव तथा अन्य  
 बहुत से देव और देवियों व सामने ऐसा कहा कि जम्बूद्वीप  
 के भरतक्षेत्र की चम्पानगरी में कामदेव नामक एक श्रमणो-  
 पामक रहता है । श्रावक वह अपनी पौषधशाला में पौषध करके  
 ढाभ के सथारे पर बैठा हुआ धर्मध्यान में तल्लीन है । किसी  
 देव, दानव और गन्धर्व म ऐसा मामर्ध्य नहीं है जो कामदेव  
 श्रावक को निर्ग्रन्थ प्रवचनों से टिगा मरे और उमर चिच को  
 चञ्चल कर सके । शक्रेन्द्र ने इस कथन पर मुझे विश्वास नहीं  
 हुआ । इस लिये तुम्हारी परीक्षा करने के लिये मैं यहाँ आया  
 और तुम्हें अनेक प्रकार से परीषद उपमर्ग उत्पन्न कर कष्ट  
 पहुँचाया, किन्तु तुम जग भी विचलित न हुए । शक्रेन्द्र ने  
 तुम्हारी दृढ़ता की जैसी प्रशंसा की थी रास्तर में तुम वैसे ही  
 हो । मैंने जो तुम्हें कष्ट पहुँचाया उसके लिये मैं क्षमा की प्रार्थना  
 करता हूँ । मुझे क्षमा कीजिये । आप क्षमा करने के योग्य हैं ।  
 अब मैं आगे से कभी ऐसा काम नहीं करूँगा । ऐसा कह कर  
 वह देव दोनों हाथ जोड़ कर कामदेव, श्रावक के पैरा में गिर  
 पडा । इस प्रकार अपने अपराध की क्षमा याचना कर वह देव

अपने स्थान को चला गया। उपसर्ग रहित होकर कामदेव श्रावक ने पडिमा (कायोत्सर्ग) को पारा अर्थात् खोला।

ग्रामानुग्राम पिचरते हुए भगवान् महावीर स्वामी उहाँ पचारे। कामदेव श्रावक को जब इस बात की सूचना मिली तो उसने विचार किया कि जब भगवान् यहाँ पर पचारे हैं तो मेरे लिए यह श्रेष्ठ है कि भगवान् को उन्दना नमस्कार करके उहाँ मे चापिम लौटने के बाद मैं पाँपध पाम् और आहार, पानी ग्रहण करूँ। ऐसा विचार कर ममा के योग्य वस्त्र पहन कर कामदेव श्रावक भगवान् के पास पहुँचा और शर श्रावक \* की तरह भगवान् की प्युपासना करने लगा। धर्म कथा समाप्त होने पर भगवान् ने रात्रि के अन्दर पाँपधशाला में बैठे हुए कामदेव को देव द्वारा दिये गये पिशाच, हाथी और सर्प के तीन उपमर्गों का वर्णन किया और श्रमण निर्ग्रन्थ और निर्ग्रन्थियों को सम्बोधित करके फरमाने लगे कि हे आर्यों! जब घर में रहने वाले गृहस्थ श्रावक भी देव, मनुष्य और तिर्यञ्च सम्प्रन्धी उपमर्गों को सम-भाज पूर्वक महन करते हैं और धर्मध्यान में दृढ रहते हैं तो द्वादशाङ्ग गणितिक के धारक श्रमण निर्ग्रन्थों को तो ऐसे उपसर्ग महन करने के लिए मदा तत्पर रहना ही चाहिए। भगवान् की इस बात को सब श्रमण निर्ग्रन्थों ने विनय पूर्वक स्वीकार किया।

कामदेव श्रावक ने भी भगवान् से उहुत से प्रश्न पूछे और उनका अर्थ ग्रहण किया। अर्थ ग्रहण कर हर्षित होता हुआ कामदेव श्रावक अपने घर आया। उधर भगवान् भी चम्पा नगरी से विहार कर ग्रामानुग्राम पिचरने लगे।

कामदेव श्रावक ने ग्यारह पडिमाथों का भली प्रकार पालन किया। बास वर्ष तक श्रावक पर्याय का पालन कर सलेखना सथारा

\* शर श्रावक का वर्णन इसी भाग के बोल न० ६२४ में है।

क्रिया । माठ भक्त अनशन को पूरा कर अर्थात् एक मास की सलेखना कर समाधि मरण को प्राप्त हुआ और माँघर्म देवलोक में साँघर्मावतमरु महाविमान के ईशान कोण में स्थित अरुणाभ नामक विमान में उत्पन्न हुआ । उहाँ चार पल्योपम की स्थिति को पूर्ण करके महाविदेह क्षेत्र में उत्पन्न होगा और उमी भय में मित्र, बुद्ध यावत् मुक्त होकर मन दुःखों का अन्त कर मोक्ष सुख को प्राप्त करेगा ।

( ३ ) चुलनीपिता श्रावण— वाराणसी (वनात्म) नगरी मजितशु राजा राज्य करता । उमी नगरी में चुलनीपिता नाम का एक गाथापति रहता था । वह मन तरह से सम्पन्न और अपरिभूत था । उसका ज्यामा नाम की धर्मपत्नी थी । चुलनीपिता के पास बहुत श्रद्धि थी । आठ करोड़ मोर्नये बनाने में रते हुए ये, आठ करोड़ व्यापार में और आठ करोड़ प्रतिस्तार (धन्य धान्यादि) में लगे हुए थे । दस हजार गायों के एक गोकुल के हिमान से आठ गोकुल थे अर्थात् उमके पास कुल अस्मी हजार गाय थी । यह उस नगर में आनन्द श्रावक की तरह प्रतिष्ठित एक मान्य था । एक समय भगवान् महावीर स्वामी उहाँ पधारे । यह भगवान् को वन्दना नमस्कार करने गया और कामदेव श्रावक की तरह उसने भी श्रावक के व्रत अङ्गीकार किये । एक समय वह पाँपधोपनाम कर पाँपधशाला में उठा हुआ धर्मध्यान कर रहा था । अर्द्ध रात्रि के समय उमके मामन एक देव प्रकट हुआ और कहने लगा कि यदि तू अपने व्रत नियमादि को नहीं भागेगा तो मैं तेरे उडे लडके को यहाँ लाकर तेरे मामन उमकी घात करूँगा, फिर उसके तीन उरुडे करके उबलते हुए गर्म तेल की कड़ाही में डालूँगा और फिर उमका माम आर मून तेरे शरीर पर छिड़कूँगा जिससे

तू आर्चिष्यान करता हुआ अकाल में ही मृत्यु को प्राप्त होगा। देव ने इस प्रकार दो बार तीन बार कहा किन्तु चुलनीपिता जरा भी भयभ्रान्त नहीं हुआ। तब देव ने उमा ही किया। उसके बड़े लड़के को मार कर तीन डरुडे किये। रुडाही में उमाल कर चुलनीपिता श्रावक के शरीर को गून और माम से सींचन लगा। चुलनीपिता श्रावक ने उम असह्य वेदना को समभाय पूर्णक महन किया। उसे निर्भय देख कर देव श्रावक के दूमेरे ओर तीमर पुत्र की घात कर उनके खून और मास से श्रावक के शरीर को सींचने लगा किन्तु चुलनीपिता अपने धर्म से विचलित नहीं हुआ। तब देव कहने लगा कि हे अनिष्ट क कामी चुलनीपिता श्रावक! यदि तू अपन उत नियमादि को नहीं तोडता है तो अब मैं तेरी देव गुरु तुल्य पूज्य माता को तेरे घर से लाता हूँ और इसी तरह उसकी भी घात करके उसके खून और मास से तेर शरीर को सींचूँगा। देव ने एक वक्त दो वक्त और तीन वक्त ऐसा कहा तब श्रावक देव के पूर्ण कार्यों को विचारने लगा कि इसने मेरे बड़े, मझले और सन से छोटे लड़के को मार कर उनके खून और मास से मेरे शरीर को सींचा। मैं इन सन को सहन करता रहा अब यह मेरी माता भद्रा सार्थवाही, जो कि देव गुरु तुल्य पूजनीय है, उसे भी मार देना चाहता है। यह पुरुष अनार्य है और अनार्य पाप कर्मों का आचरण करता है। अब इस पुरुष को पकड लेना ही अच्छा है। ऐसा विचार कर वह उठा किन्तु देव ती आकाश में भाग गया। चुलनीपिता के हाथ में एक सज्जा आगया और वह जोर जोर से चिल्लाने लगा। उम चिल्लाहट को सुन कर भद्रा सार्थवाही वहाँ आकर कहने लगी कि पुत्र! तुम ऐसे जोर जोर से क्यों चिल्लाते हो। तब चुलनीपिता श्रावक ने सारा वृत्तान्त अपनी माता भद्रा सार्थवाही से

रहा। यह सुन कर भद्रा बहुत लगी कि हे पुत्र ! यदि भी प्रकृत तुम्हारे शिरी भी पुत्र का परम नहीं माना और न ही मानने वाला ही है। शिरी प्रकृत न तुम्हारे उन्मत्त दिवा है ! गरी शरीर हृदय मन्त्रा मित्रा है। श्राप के कारण उम दिवस और श्राप मुक्ति बाल प्रकृतों पर नन न निग मग प्रकृत हृदय इमन्त्रि भाव न श्रुत प्रकृतियां विमग मग का मग हृमा है। श्राप श्रुत म शिरी थापक को भापगी और निम्नपापी दोनों तरह न प्राणिया की दिगा का त्याग होगा है। अमना प्रकृत दौड़न न श्राप का और श्राप क भान न फगाय म्ना म्भ उम सुत (निदम) का भी मग हृमा है। श्रमन्त्रि हे पुत्र ! अद सुम दण्ड प्राणिया लपर अमनी आत्मा का मुद्र करो।

चूलनीपिता थापक न अमना माता की बात का विनय पूर्वक श्राप शिरी और आनोपना हर तरह प्राणिया निग।

चूलनीपिता थापक न आन्त्रि भापक की तरह थापक की म्भारह पटिमां अन्नीरार की और श्रुत क अन्नुगार उनका य श्राप पालन शिरी। अन्त्रि में श्राप्य भापक की तरह म्भारि म्भार श्राप म्भार म्भार ददलाक में म्भारमन्त्रमर विमान क इजान लोग में अन्त्राम विमान में देख म्भार उ'पम हृमा। वही श्राप पन्नीपम की आन्त्रि वही करन म्भारि'द' श्राप में नम लगा और उर्मा म्भार में श्राप जागगा।

( ५ ) मुरादेव थापक— वनारम नाम की नगरी में विनागु राजा राज्य करता था। उम नगरी में मुरादेव नामक एक गाशपति रहता था। उम पान अटारह वगड़ म्भारियों की म्भारि थी और हे म्भारों क म्भारि थ। उमर म्भारि नाम की म्भारि थी। एक म्भारि वही पर म्भारि म्भारि म्भारि म्भारि। मुरादेव न म्भारि क पान थापक के श्रुत अन्नीरार शिरी।

एक समय सुरादेव पाँपध करके पाँपधशाला में बैठा हुआ वर्मध्यान में तल्लीन था। अर्द्ध रात्रि के समय उसके सामने एक देव प्रकट हुआ और सुरादेव से बोला कि यदि तू अपने व्रत नियमादि को नहीं तोड़ेगा तो मैं तेरे बड़े नेत्रों को मार कर उसके शरीर के पाँच टुकड़े करके उबलते हुए तेल की कड़ाही में डाल दूँगा और फिर उसके मांस और रून से तेरे शरीर को मीचूँगा निममे तू आर्चध्यान करता हुआ अकाल मरण प्राप्त करेगा। इसी प्रकार मझले और छोटे लडके के लिए भी कहा और ऐसा ही किया किन्तु सुरादेव जरा भी विचलित न हुआ। प्रत्युत उस शमद्वेदना को महन करता रहा। सुरादेव श्रावक को अविचलित देख कर यह देव इस प्रकार कहने लगा कि हे यनिष्ट के कामी सुरादेव ! यदि तू अपने व्रत नियमादि को भङ्ग नहीं करेगा तो मैं तेरे शरीर में एक ही माध (१) थास (२) काम (३) ज्वर (४) दाह (५) कुत्तिशूल (६) भगन्दर (७) अर्श (जगामीर) (८) अजीर्ण (९) दृष्टिरोग (१०) मन्तकशूल (११) अरुचि (१२) अग्निवेदना (१३) कर्णवेदना (१४) सुजली (१५) पेट का रोग और (१६) कोढ़, ये सोलह रोग डाल दूँगा जिममे तू तड़प तड़प कर अकाल में ही प्राण छोड़ देगा।

इतना कहने पर भी सुरादेव श्रावक भयभीत न हुआ। तब देव ने दूसरी बार और तीसरी बार भी ऐसा ही कहा। तब सुरादेव श्रावक को विचार आया कि यह पुरुष अनार्य मालूम होता है। इसे पकड़ लेना ही अच्छा है। ऐसा विचार कर वह उठा किन्तु देव तो आकाश में भाग गया, उसके हाथ में एक गम्भा आ गया जिसे पकड़ कर वह कोलाहल करने लगा। तब उसकी स्त्री धन्या आई और उससे सारा वृत्तान्त सुन कर सुरादेव से कहने लगी कि हे आर्य ! आपके तीनों लडके आनन्द

में हैं। किसी पुरुष ने आपको यह उपमर्ग दिया है। आपने व्रत नियम आदि भङ्ग हो गए हैं। अतः आप दण्ड प्रायश्चित्त लेकर अपनी आत्मा को शुद्ध करो। तब सुरादेव श्रावक न व्रत नियम आदि भङ्ग होना का दण्ड प्रायश्चित्त लिया।

अन्तिम समय में सलपना द्वारा समाधि मग्न प्राप्त कर मोक्षमार्ग रूप में प्रकृत ज्ञान प्राप्त होकर देव रूप में उत्पन्न हुआ। चार पल्योपम की आयु पूरी करके महाप्रदेह क्षेत्र में उत्पन्न होगा और वहाँ से उन्नी भव में मोक्ष जायगा।

( ५ ) चुल्ल शतक श्रावक- आलम्बिका नामक नगरी में जितशत्रु राजा राज्य करता था। उस नगरी में चुल्लशतक (चंद्रशतक) नाम का एक गाथापति रहता था। वह बड़ा धनाढ्य मेट था। उसके पास अठारह करोड़ सोने के सिक्के और गाथों के छः गोकुल थे। उसकी भार्या का नाम बहुला था। एक समय श्रमण भगवान् महावीर वहाँ पार। चुल्लशतक ने आनन्द श्रावक की तरह श्रावक के व्रत अङ्गीकार किए। एक समय वह पौषधशाला में पौषध करके धर्मध्यान में स्थित था। अर्द्धरात्रि के समय एक देव उसके सामने प्रकट हुआ। हाथ में तलवार लेकर वह चुल्लशतक श्रावक से कहने लगा कि यदि तू अपने व्रत नियमादि का भङ्ग नहीं करेगा तो मैं तेरे पडे लडके की तरफ सामने घात करूँगा और उसके मात डण्डे करके उजलत हुए तेल की बूझाही में डाल कर गून और मांस में तेरा शरीर को सींचूँगा। इसी तरह दूरे और तीमर लडके के लिये भी कहा और ऐसा ही किया किन्तु चुल्लशतक श्रावक धर्मध्यान से विचलित न हुआ तब देव ने उससे कहा कि तेरे अठारह करोड़ सोने के धर से लेकर आलम्बिका नगरी के मार्गों और चौराहों में बिखेर दूँगा। देव ने दूसरी और तीमरी बार भी

इसी तरह कहा, तब श्रावक की विचार आया कि यह पुरुष अनार्य है उसे पकड़ लेना चाहिए। ऐसा विचार कर वह सुरादेव श्रावक की तरह उठा। देव के चले जाने में सम्भा दाय में आगया। तत्पश्चात् उसकी भार्या ने चिल्लाने का कारण पूछा। मन वृत्तान्त सुन कर उसने चुल्लशतक को दण्ड प्रायश्चित्त देने के लिए कहा। तदनुसार उसने दण्ड प्रायश्चित्त लेकर अपनी आत्मा को शुद्ध किया।

अन्त में मलेगना कर समाधि मरण पूर्वक देह त्याग कर माधर्म कल्प में अरुणमिद्ध विमान में देव रूप में उत्पन्न हुआ। चार पत्न्योपम की स्थिति पूर्ण करके वह महाविदेह क्षेत्र में जन्म ले कर मोक्ष प्राप्त करेगा।

( ६ ) कुण्डकोलिक श्रावक— कम्पिलपुर नगर में जितशत्रु राजा राज्य करता था। उस नगर में कुण्डकोलिक गाथापति रहता था। उसके पास अठारह करोड़ मोनों की सम्पत्ति थी और गायों के ३० गोकुल थे। वह नगर में प्रतिष्ठित एक मान्य था। एक समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पधारे। कुण्डकोलिक गाथापति दर्शनार्थ गया और आनन्द श्रावक की तरह उसने भी भगवान् के पास श्रावक के त्रत अङ्गीकार किए।

एक समय कुण्डकोलिक श्रावक दोपहर के समय अशोकवन में पृथ्वीशिलापट्ट (पत्थर की चाँकी) की ओर आया। स्नानाभाङ्कित मुद्रिका और दुपट्टा उतार कर शिला पर रख दिया और धर्म-व्यान में लग गया। ऐसे समय में उसके सामने एक देव प्रकट हुआ और उसकी मुद्रिका और दुपट्टा उठा कर आकाश में लहरा होकर इस प्रकार कहने लगा कि हे कुण्डकोलिक श्रावक! मंसलि-पुत्र गोगालक की धर्मप्रज्ञप्ति सुन्दर (हितकर) है क्योंकि उसके मत में उत्थान, कर्म, बल, धीर्य, पुरुषाकार, पराक्रम कुल्ल भी नहीं



हैं। सब पदार्थ नियत हैं। श्रमण भगवान् महावीर स्वामी जी धर्मप्रज्ञप्ति सुन्दर नहीं है, क्योंकि उममें उत्थानादि सब कर्म हैं और नियत कुछ भी नहीं है। देव के ऐसा कहने पर कुण्डकोलिक श्रावण ने उममें पूछा कि हे देव ! जैसा तुम कहते हो यदि पैसा ही है तो बतलाओ यह दिव्य ऋद्धि, दिव्य कान्ति और दिव्य देवानुभाव ( अलौकिक प्रभाव ) तुम्हें कैसे प्राप्त हुए हैं ? क्या बिना ही पुरुषार्थ किये य सब चीजें तुम्हें प्राप्त हो गई हैं ? देव— हे देवानुप्रिय ! यह दिव्य ऋद्धि, कान्ति आदि सब पदार्थ मुझे पुरुषार्थ एवं पराक्रम किए बिना ही प्राप्त हुए हैं

कुण्डकोलिक— हे देव ! यदि तुम्हें ये सब पदार्थ बिना ही पुरुषार्थ किए मिल गए हैं तो तिन जीवों में उत्थान, पुरुषार्थ आदि नहीं हैं ऐसे बृच, पापाण आदि देव क्यों नहीं हो जाते अर्थात् जब देवऋद्धि प्राप्त करने के लिए पुरुषार्थ की आवश्यकता नहीं है तो एकेन्द्रिय आदि समस्त जीवों को देवऋद्धि प्राप्त हो जानी चाहिए। यदि यह ऋद्धि तुम्हें पुरुषार्थ से प्राप्त हुई है तो फिर तुम्हारा यह कहना कि मगलपुत्र गोशालक की “उत्थान आदि नहीं हैं। समस्त पदार्थ नियत हैं।” यह धर्मप्रज्ञप्ति अच्छी है और श्रमण भगवान् महावीर जी “उत्थान आदि हैं। पदार्थ नियत नहीं हैं” यह प्रकृषणा ठीक नहीं है। इत्यादि तुम्हारा कथन मिथ्या है। क्योंकि उत्थान आदि फल की प्राप्ति में कारण हैं। प्रत्येक फल की प्राप्ति के लिए क्रिया की आवश्यकता रहती है।

कुण्डकोलिक श्रावण के इस युक्ति पूर्ण उच्चर को सुन कर उम देव के हृदय में शंका उत्पन्न हो गई कि गोशालक का मत ठीक है या भगवान् महावीर का ? राठ विवाद में पराजित हो जान के कारण उमें आत्मग्लानि भी पैदा हुई। वह देव कुण्डकोलिक

श्रावक को कुछ भी ज्ञान देन में समर्थ नहीं हुआ। इसलिए श्रावक की स्वनामाङ्कित मुद्रिका और दुपट्टा जहाँ में उठाया या उन गिला पट्ट पर रख कर स्वस्थान को चला गया।

उम समय श्रमण भगवान महावीर ग्यामी ग्रामानुग्राम विहार करते हुए वहाँ प्यारे। भगवान का आगमन सुन कर कुण्डकोलिक बहुत प्रसन्न हुआ और भगवान् के दर्शन करने के लिए गया। भगवान् ने उम देव और कुण्डकोलिक के बीच जो प्रश्नोत्तर हुए उनका जिक्र कर कुण्डकोलिक ने पूछा कि क्या यह बात मत्थ है ? कुण्डकोलिक ने उत्तर दिया कि हे भगवान् ! जैसा आप फरमाते हैं वैसी ही घटना मंग माथ हुई है। तब भगवान् सब श्रमण निर्ग्रन्थ और निर्ग्रन्थियों को जुला कर फरमाने लगे कि गृहस्थानाम में रहते हुए गृहस्थ भी अन्य युक्तियों को अर्थ, हेतु, प्रश्न और युक्तियों से निरुत्तर कर मरते हैं तो हे श्राव्यो ! डादशाग का अध्ययन करने वाले श्रमण निर्ग्रन्थों को तो उन्हे (अन्ययुक्तियों को) हेतु और युक्तियों से अज्ञ्य ही निरुत्तर करना चाहिए।

सब श्रमण निर्ग्रन्थों ने भगवान् के इस कथन को पिनप के माथ तहति (तथेति) रह कर म्बीमार किया।

कुण्डकोलिक श्रावक को त्रत, नियम, शील आदि का पालन करते हुए चौदह वर्ष व्यतीत होगये। जब पन्द्रहवा वर्ष गीत रहा था तब एक समय कुण्डकोलिक ने अपन घर का भार अपने ज्येष्ठ पुत्र को सौंप दिया और आप धर्मध्यान में समय बिताने लगा। सूत्रोक्त विधि में श्रावक की ग्यारह पडिमाओं का आराधन किया। अन्तिम समय में सलेखना कर माधर्म कल्प के अरुणध्वज विमान में टेरपने में उत्पन्न हुआ। वहाँ में जब कर महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेकर मोक्ष जायगा।

(७) मन्मथपुर श्रावण- पोलामपुर नगर में चित्तेश्वर राजा राज्य करता था। उस नगर में मन्मथपुर ( मरुडालपुर ) नामक एक वृन्दार रहता था। यह श्रीगणेश (गोशालक) मत का अनुयायी था। गोशालक के मिद्वान्ता का प्रेम और अनुराग उमकी रगल में मरा हुआ था। गोशालक का मिद्वान्त ही अर्थ है, परमाद्य है दूसरे मत प्रत्यर्थ है, हमी उमकी मान्यता थी। मन्मथपुर श्रावण के पास तीन करोड़ मान्यों की सम्पत्ति थी। दस हजार गाँवों का एक गोशुल था। उमकी पत्नी का नाम अग्निमित्रा था। पोलामपुर नगर के बाहर मन्मथपुर की पंच सौ टूकानें थीं। जिन पर बहुत से नाँव रखे जाते थे। वे जल भरने के घड़े, छाटी घड़लियाँ, कलश (बड़े बड़े भाटे) सुराही, डुले आदि अनेक प्रकार के मिट्टी के बतन बना कर बेचा करते थे।

एक दिन दापहर के समय वह अशोक वन में जाकर धर्मध्यान में स्थित था। इसी समय एक देव उमके सामने प्रकट हुआ। वह रहस्य लगा कि त्रिशूल वाता, वेदल ज्ञान और फल दर्शन के शरक, अरिहन्त, जिन, फली महामाहण फल यहाँ पधारेंगे। अतः उनकी वन्दना करना, भक्ति करना तथा पीठ, फल, श्रया, मन्तार आदि के लिए व्रतित करना तुम्हारे लिए योग्य है। दो तीन बार ऐसा वह कर देव आपिस अपने स्थान को चला गया। देव का वचन सुन कर मन्मथपुर विचारने लगा कि मेरे धर्माचार्य मन्मथपुर गोशालक ही उपराक्त गुणा में युक्त महामाहण हैं। वे ही फल यहाँ पधारेंगे।

दूसरे दिन प्रातः काल श्रमण भगवान् महाश्रीर स्वामी वहाँ पधार। नगर निवासी लोग वन्दना करने के लिये निकले। महा माहण का आगमन सुन मन्मथपुर विचारने लगा कि भगवान् महाश्रीर स्वामी यहाँ पधारें हैं तो मैं भी उन्हें वन्दना नमस्कार करने

जाऊँ। ऐमा विचार कर स्नान कर सभा में जाने योग्य वस्त्र पहन कर महस्ताभ्रजन उद्यान में भगवान् को उन्दना नमस्कार करने के लिए गया। भगवान् ने कर्मकथा कही। इसके बाद मद्दालपुत्र से उस देव के आगमन की बात पूछी। मद्दालपुत्र ने कहा—हाँ भगवान् ! आपका कथन यथार्थ है। एक देव न मेरे स ऐमा ही कहा था। तब भगवान् न फरमाया कि उम देव ने मंगलपुत्र गौशालक को ललित कर एमा नहीं कहा था। भगवान् की बात सुन कर मद्दालपुत्र विचारने लगा कि भगवान् महावीर ही मर्जज, मर्जर्गी, महामाहण हैं। पीठ फलक, शय्या, मस्तारक के लिए मुझे उनसे विनति करनी चाहिए। ऐमा विचार कर उमने भगवान् से विनति की कि पोलासपुर नगर के बाहर मेरी पाँच सौ दूकानें हैं। जहाँ में पीठ, फलक, शय्या, मस्तारक लेकर आप विचरें। भगवान् महावीर न उसकी प्रार्थना को सुना और यथावसर मद्दालपुत्र की पाँच सौ दूकानों में में पीठ फलक आदि लेकर विचरने लगे।

एक दिन मद्दालपुत्र अपनी अन्दर की शाला में में गीले मिट्टी के वर्तन निकाल कर सुखाने के लिए धूप में रख रहा था। तब भगवान् न मद्दालपुत्र से पूछा कि ये वर्तन कैसे उने हैं? मद्दालपुत्र—भगवान् ! पहले मिट्टी लाई गई। उम मिट्टी में राख आदि मिलाए गए और पानी में भीगे कर वह सूख गंठी गई। जब मिट्टी वर्तन बनाने के योग्य होगई, तब उमें चारु पर रख कर ये वर्तन बनाये गए हैं।

भगवान्—हे मद्दालपुत्र ! ये वर्तन उत्थान, उल, शीर्ष, पुरुषाकार आदि में उने हैं या विना ही उत्थान आदि के उने हैं ?

मद्दालपुत्र— ये वर्तन उत्थान पुरुषाकार पराक्रम के विना ही उने गये हैं क्योंकि उत्थानादि तो हैं ही नहीं। सब पदार्थ

नियत ( होनहार ) से ही होते हैं ।

भगवान्—महालपुत्र ! यदि कोई पुरुष तुम्हारे इन वर्तनों को चुरा ले, फट दे, फोड़ दे अथवा तुम्हारी अप्रिमित्रा भार्या के साथ मनमाने कामभोग भोगे तो उस पुरुष को तुम क्या दण्ड दोगे ?

महालपुत्र—भगवान् ! मैं उस पुरुष को मृत करने के लिए उल्लाहना दूँ, टंटे में मारूँ, रस्मी में बाँध दूँ और यहाँ तक कि उसके प्राण भी लूँ ।

भगवान्—महालपुत्र ! तुम्हारी मान्यता के अनुसार तो न कोई पुरुष तुम्हारे वर्तन चुराता है, फटता है या फोड़ता है और न कोई तुम्हारी अप्रिमित्रा भार्या के साथ काम भोग भोगता है किन्तु जो दुष्ट होता है वह मन भवितव्यता में ही हो जाता है । फिर तुम उस पुरुष को दण्ड क्यों देते हो ? इसलिए तुम्हारी यह मान्यता कि 'उत्थान आदि दुष्ट नहीं हैं मन भवितव्यता में ही हो जाता है' मिथ्या है ।

भगवान् के इस कथन में महालपुत्र को रोष हो गया । भगवान् के पास घमापदेश सुन कर उसने आनन्द श्रावण की तरह श्रावण के प्रति अङ्गीकार किया । तीन फोड़ मान्ये और एक गान्धूल रखा । भगवान् को वन्दना नमस्कार कर महालपुत्र ने आपिस अपने पर आकर अप्रिमित्रा भार्या को सब वृत्तान्त कहा । फिर अप्रिमित्रा भार्या ने कहने लगा कि हे देवानुप्रिये ! प्रमाण भगवान् महावीर स्वामी पराए हैं । अब तुम भी जाओ और श्रावण के प्रति अङ्गीकार करो । अप्रिमित्रा भार्या ने अपने पति की बात को स्वीकार किया । महालपुत्र ने अपने काटुम्बिक पुरुषों को (नीकरों को) एक श्रेष्ठ उमरथ जोत कर लाने की आज्ञा दी जिस में तेज चलने वाले, एक समान गुर और पूँछ वाले एक ही रंग के तथा चिनड़े माग करूँ रंगों में रंगे हुए हों ऐसे

वैल जुड़े हुए हों, जिसका घोंसरा त्रिबुल मीघा, उत्तम और अच्छी वनावट वाला हो। आज्ञा पाकर नौकरों ने शीघ्र ही वैसा रथ लाकर उपस्थित किया। अग्निमित्रा भार्या ने स्नान आदि करके उत्तम वस्त्र पहने और अल्प भार एवं बहुमूल्य वाले आभूषणों से शरीर को अलंकृत कर बहुत सी दामियों को साथ लेकर रथ पर सवार हुई। महस्रात्र जन में आकर रथ से नीचे उतरी। भगवान् को वन्दना नमस्कार कर खड़ी खड़ी भगवान् की पर्युपासना करने लगी। भगवान् का धर्मोपदेश सुन कर अग्निमित्रा भार्या ने श्राविका के व्रत स्वीकार किये। फिर भगवान् को वन्दना नमस्कार कर वह गणिस अपने घर चली आई। भगवान् पोलासपुर से निहास कर अन्यत्र विचरने लगे। जीवाजीमादि नम तर्कों का ज्ञाता श्रावक जन कर सद्दालपुत्र भी धर्म ध्यान में समय विताने लगा।

मरालिपुत्र गोशालक ने जन यह वृत्तान्त सुना कि सद्दालपुत्र ने आजीविक मत को त्याग कर निर्ग्रन्थ श्रमण का मत अङ्गीकार किया है तो उसने मोचा “में जाऊँ और आजीविकोपासक सद्दालपुत्र को निर्ग्रन्थ श्रमण मत का त्याग करना कर फिर आजीविक मत का अनुयायी बनाऊँ” ऐसा विचार कर अपनी शिष्य मण्डली सहित वह पोलासपुर नगर में आया। आजीविक मभा में अपने मण्डोपकरण रख कर अपने कुछ शिष्यों को साथ लेकर सद्दालपुत्र श्रावक के पास आया। गोशालक को आते देख सद्दालपुत्र श्रावक ने किमी प्रकार का आदर सत्कार नहीं किया किन्तु चुपचाप बैठा रहा। तत्र पीठ, फलक, शय्या, संस्तारक आदि लेने के लिये भगवान् महावीर के गुणग्राम करता हुआ गोशालक बोला— हे देवानुप्रिय! क्या यहाँ महामाहण पधारें थे? सद्दालपुत्र— आप किम महामाहण के लिए पूछ रहे हो ?

गोशालक- श्रमण भगवान् महावीर महामाहण के लिए ।

सदालपुत्र- किम अभिप्राय मे आप श्रमण भगवान् महावीर को महामाहण कहते हैं ?

गोशालक- हे सदालपुत्र ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी केवलज्ञान, केवलदर्शन के धारक हैं । वे इन्द्र नरेन्द्रों द्वारा महित एव पूजित हैं । इसी अभिप्राय मे मैं कहता हूँ श्रमण भगवान् महावीर स्वामी महामाहण हैं ।

गोशालक-सदालपुत्र ! क्या यहाँ महागोप (प्राणियों के रक्षक) पधारें थे ?

सदालपुत्र-आप किमने लिए महागोप शब्द का प्रयोग कर रहे हो ?

गोशालक- श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के लिए ।

सदालपुत्र- आप किम अभिप्राय से श्रमण भगवान् महावीर को महागोप कहते हैं ?

गोशालक- ससार रूपी विन्दु अटवी में प्रवचन से अष्ट होने वाले, प्रति क्षण मरने वाले, मृग प्रादि डरपोक योनियों में उत्पन्न होकर सिंह याघ आदि से मार्ये जाने वाले, मनुष्य आदि श्रेष्ठ योनियों में उत्पन्न होकर युद्ध आदि में मरने वाले तथा भाले आदि से घीघे जाने वाले, चोरी आदि करने पर नाश जान आदि काट कर गम हीन बनाए जाने वाले तथा अन्य अनक प्रकार के दुःख और नाम पाने वाले प्राणियों की धर्म का स्वरूप समझा कर अत्यन्त एव अव्याग्राध मृत्यु के स्थान मोक्ष में पहुँचाने वाले श्रमण भगवान् महावीर हैं । इस अभिप्राय मे मैं उनको महागोप कहा हूँ ।

गोशालक- सदालपुत्र ! क्या यहाँ महामार्थवाह पधारें थे ?

सदालपुत्र- आप किसको महामार्थवाह कहते हैं ?

गोशालक-श्रमण भगवान् महावीर को मैं महामार्थवाह कहता हूँ ।

मदानपुर- किम अभिप्राय मे आप श्रमण भगवान् महावीर  
 वा महामार्थवाद कहते हैं ?

गोशालक- श्रमण भगवान् महावीर स्वामी समार स्त्री अटनी  
 म चट अट- रायत् विज्जलाद्द क्रिये जान जाले वहुत्त मे नीयों  
 को घम का मार्ग बना कर उनका सरक्षण करते हैं आर मौत्त  
 स्त्री महा नगर के सन्मुख करते हैं । इगु लिए भगवान् महावीर  
 स्वामी महामार्थवाद हैं ।

गोशालक-देवानुप्रिय ! क्या यहाँ महा धर्मद्वी (वर्मापदेशन)  
 प्यारे वे ?

मदानपुर- आप महाधर्मद्वी जट्ट का प्रयोग श्रमिके लिए  
 कर रहे हैं ?

गोशालक-महाधर्मद्वी जट्ट का प्रयोग श्रमण भगवान् महावीर,  
 स्वामी के लिए है ।

मदानपुर-श्रमण भगवान् महावीर का आप महाधर्मद्वी किम  
 अभिप्राय मे करने ह ?

गोशालक-संनार स्त्री विकट अटनी म मि यान् क प्रवृत्त उच्य  
 य पुमार्ग को छोड कर पुमार्ग (समस्यान्व) में गहन जग्न जाले  
 कर्मों के जग्न सगार में चार खान राते प्रसिद्धों को घमकथा  
 कर कर रायत् प्रतिरोध देकर चार गादि क- उगात म पार  
 नगान रात श्रमण भगवान् महावीर स्वामी हैं (इगु लिए उन्  
 महाधर्मद्वी (धर्म के महा उपदेशक) कहा है ।

गोशालक- तदालपुर ! क्या यहाँ महामार्थवाद प्यारे वे ?

तदालपुर- आप महानिर्गमक किम कहते हैं ?

गोशालक-श्रमण भगवान् महावीर स्वामी का

मदानपुर- श्रमण भगवान् महावीर का आप किम अभिप्राय  
 मे महानिर्गमक रहते हैं ?



गोशालक—संसार रूपी महान् समुद्र में नष्ट होने वाले, डूबने वाले, धारम्भार गोते खाने वाले तथा ग्रहने वाले बहुत से जीवों को धर्म रूपी नौका में निर्माण रूपी किनारे पर पहुँचाने वाले श्रमण भगवान् महावीर हैं। इस लिए उन्हें महानिर्यामक कहा है।

फिर सद्दालपुत्र श्रावक मंगलपुत्र गोशालक से इस प्रकार कहने लगा कि हे देवानुप्रिय ! आप अक्सरज्ञ (अक्सर को जानने वाले) हैं और वाणी में बड़े चतुर हैं। क्या आप मेरे धर्माचार्य्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर के साथ विवाद (शास्त्रार्थ) करने में समर्थ हैं ?

गोशालक— नहीं।

सद्दालपुत्र— देवानुप्रिय ! आप इस प्रकार इन्कार क्यों करते हैं ? क्या आप भगवान् महावीर के साथ शास्त्रार्थ करने में असमर्थ हैं ?

गोशालक— जैसे कोई बलवान् पुरुष किमी बकरे, मेंढ़े, सूअर, मुर्गे, तीतर, बटेर, लावक, कूतर, कौआ, बाज आदि पक्षी को उसके हाथ, पैर, सुर, पूँछ, पख, बाल आदि जिम किसी जगह में पकड़ता है वह वहीं उसे निश्चल और निस्पन्द करके दना देता है। जरा भी इधर उधर हिलने नहीं देता है। इसी प्रकार श्रमण भगवान् महावीर से मैं जहाँ कहीं कुछ प्रश्न करता हूँ अनेक हेतुओं और युक्तियों से वे वहीं मुझे निस्तर कर देते हैं। इसलिए मैं तुम्हारे धर्माचार्य्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर स्वामी से शास्त्रार्थ करने में असमर्थ हूँ।

तब सद्दालपुत्र श्रमणोपासक ने गोशालक से कहा कि आप मेरे धर्माचार्य्य के यथार्थ गुणों का कीर्तन करते हैं। इसलिए मैं आपको पीठ, फलक, शय्या, संस्तारक आदि देता हूँ किन्तु कोई धर्म या तप समझ कर नहीं। इसलिए आप मेरी दूकानों पर से पीठ, फलक शय्या आदि ले लीजिए। सद्दालपुत्र

श्रावक की बात सुन कर गोगालक उमकी दूकानों से पीठ फलक आदि लेकर प्रिचरने लगा। जन गोगालक हेतु और युक्तियों से, प्रतिबोधक वाक्यों से और अनुनय प्रिनय से मदाल-पुत्र श्रावक को निर्ग्रन्थ प्रपचनों से चलाने में नमर्थ नहीं हुआ तब श्रान्त, उदास और ग्लान ( निराश ) होकर पोलासपुर नगर से निकल कर अन्यत्र प्रिचरने लगा।

व्रत, नियम, पाँपधोषनाम आदि का मम्यन् पालन करते हुए मदालपुत्र को चौदह वर्ष जीत गये। पन्द्रहवा वर्ष जन चल रहा था तब एक समय मदालपुत्र पाँपध करके पाँपधशाला में धर्मध्यान कर रहा था। अर्द्ध रात्रि के समय उमके सामने एक देव प्रकट हुआ। चुलनीपिता श्रावक की तरह मदालपुत्र को भी उपसर्ग दिये। उसके तीनों पुत्रों की घात कर उनके नाँ नाँ डकड़े किए और उनके खून और मास से मदालपुत्र के शरीर को सींचा। इतना होने पर भी जन मदालपुत्र निर्भय बना रहा तब देव ने चौथी वक्त कहा कि यदि तू अपने व्रत नियम आदि को नहीं तोड़ेगा तो मैं तेरी धर्मसहायिका (धर्म में महायता देने वाली) धर्म वैद्य (धर्म को सुरक्षित रखने वाली), धर्म के अनुराग में रगी हुई, तेरे सुख दुःख में समान सहायता देने वाली अग्निमित्रा भार्या को तेरे घर में लाकर तेरे सामने उसकी घात कर उसके खून और मास में तेरे शरीर को सींचूँगा। देव के दो बार तीन बार यही बात कहने पर मदालपुत्र श्रावक के मन में प्रिचार आया कि यह कोई अनार्य पुरुष है। इसे पकड़ लेना ही अच्छा है। पकड़ने के लिए ज्यों ही मदालपुत्र उठा त्यों ही देव तो आकाश में भाग गया और उसके हाथ में खम्भा आगया। उमका कोलाहल सुन उसकी अग्निमित्रा भार्या वहाँ आई और सारा श्रान्त सुन कर उमने मदालपुत्र श्रावक से

एक प्रायश्चित्त लगे के लिए गया। तत्पुत्राएँ एक पारश्वी  
 लख महालपुत्र थायक ने अपनी आत्मा को शुद्ध किया।

महालपुत्र अन्तिम समय संवेत्तना द्वारा ममाभिप्रेत पूर्व  
 काल करके पं. र्गदेवलोकर अरुणभूत विमान में उत्पन्न हुआ।  
 चार पत्नीयमना स्थिति पूर्ण करके महाविद्वत् क्षेत्र में जन्म लगा  
 और उर्मी म उर्मी भव प्र मान चारगा।

( ८ ) महाशतक श्रावण-राजगृह नगर में श्रेष्ठ राजा राज  
 करता था। उर्मी नगर म महाशतक नाम का एक गायारति  
 रहता था। वह नगर में मान्य एक प्रतिष्ठित था। कर्त्ती क  
 रतन विशेष ने नाप हुए आठ रंगोड़ मोर्नेय उमरे गजाने में  
 ५, आठ रंगोड़ व्यापार म लग हुए थे और आठ रंगोड़ धन  
 विस्तार गति में लग हुए थे। गायो ५ आठ गोठुल धे। उन-  
 के रतती गति तेरु पुन्दर स्त्रिया थी। रतती के पाप उमरे  
 पीह म दिग हुए आठ धराइ मोर्नेय और गाओं के आठ,  
 गोठुल थे। गेव जारु स्त्रियों के पाप उनरे पीह म दिए हुए  
 एक एक रसोड सार्नेय और एक एक गोठुल था।

एक समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पयाने।  
 आनन्द थायक ही तरह महाशतक न भी श्रावण के रा  
 प्रह्लाकार स्थि। सती के वर्तन म नापे हुए चौबीस बगड  
 मोर्नेय और गाओं के आठ गोठुल (अन्धी हजार गायों) की  
 मयादा थी। रतती आदि तेरु स्त्रिया के मित्राय अन्य स्त्रियों-  
 म मैपुन का त्याग किया। उनरे एसा भी अभिग्रह लिया कि  
 प्रति दिन दो द्रोण (६४ मर) चाली, गोन म भरी हुई रामी की,  
 पात्रा ने व्ययार केगा, इस से प्रविष्ट न्दा। थायक के प्रत  
 अज्ञीकार कर महाशतक थायक धर्मध्यान से अपनी आत्मा  
 को भाषित करता हुआ रहने लगा।

एक बार अर्द्धरात्रि के समय कुटुम्ब जागरणा करती हुई रेवती गाथापत्नी को जैसा विचार उत्पन्न हुआ कि इन नारह मातों के होने से मैं महाशतक गाथापति के साथ मनमाने काम भाग नहीं भोग सकती हूँ। अतः यही अच्छा है कि शस्त्र, अग्नि या पिप का प्रयोग करके साँतों को मार दिया जाय जिससे इनका मारा धन भी मेरे हाथ लग जायगा और फिर मैं अपनी इच्छानुसार महाशतक गाथापति के साथ कामभोग भी भोग सकूँगी ऐसा सोच कर वह कोई अस्त्र नहीं ले लगी। माँका पाकर उसने छः साँतों को पिप देकर और छः को शस्त्र द्वारा मार डाला। उनके धन को अपने अधिकार में करके महाशतक गाथापति के साथ यथेच्छ काम भोग भोगने लगी। मास में लोलुप, मूर्च्छित एवं गृध्र बनी हुई रेवती अनेक तरीका से तले हुए और भूजे हुए मांस के मोल आदि बना कर खाने लगी और यथेच्छ शराय पीने लगी।

एक समय राजगृह नगर में अमारी (निंसाजदी) की घोषणा हुई। तब माम लोलुपा रेवती ने अपने पीहर के नौकरों को बुलाकर कहा कि तुम प्रति दिन मेरे पीहर वाले शौडुल में से दो गाय के बड़डा को मार कर मेरे लिए चर्खे ले आया करो। रेवती की आजानुसार नौकर लोग दो बड़डा को मार कर प्रति दिन लाने लगे। उस प्रकार प्रचुर मांस मदिरा का सेवन करती हुई रेवती समय बिताने लगी।

श्रावक के तब नियमों का भली प्रकार पालन करते हुए महाशतक के चादह वर्ष बीत गए। तन्पश्चात् वह आनन्द श्रावक की तरह ज्येष्ठ पुत्र को घर का भार सम्भला कर पीपयशाला में आकर वर्मध्यान पूर्वक समय बिताने लगा। उसी समय माम लोलुपा रेवती मद्य माम की उन्मत्तता और कामुकता के

मात्र सिग्नलानी हुई गौपधगाला में महागतरु श्रावक के पान जा पहुँची । वहाँ पहुँच कर मोह और उन्मात् को उत्पन्न करने वाले भूतार भर हाव मात्र और कटाघ आदि स्त्री भाषों को दिखाती हुई महाशतरु को लक्ष्य रक्के योनी— तुम बड़े धर्म-कामी, पुण्यकामी, स्वर्गकामी, मोक्षकामी, धर्म की आकांक्षा करने वाले, धर्म र प्याम बन पठ हो ! तुम्हें धर्म, पुण्य, स्वर्ग और मोक्ष में क्या करना है ? तुम मेरे साथ मन चाहे काम-भोग क्यों नहीं भोगते हो ? ता-पर्य यह है कि धर्म, पुण्य आदि सुख क लिण ही विण जाने हैं और विषय भोग में पढ़ कर दुमरा थोड़ सुख नहीं है । इमलिण तपस्या आदि भंभटों को छोड़ कर मेरे साथ यथेच्छ काम भोग भोगो । रेवती गाथापत्री क इम प्रकार दो तीन बार कहने पर भी महाशतरु श्रावक ने इम पर कोई ध्यान नहीं दिया किन्तु मौन रह कर धर्म ध्यान में लगा रहा । महागतरु श्रावक द्वारा किसी प्रकार का आदर स-चार न पाकर रेवती गाथापत्री अपने स्थान का वापिस चली गई ।

इमरु राद महाशतरु ने श्रावक की ग्यारह पडिमाण स्वीकार की और सुश्रोक्त सिधि से यथायत् पालन किया । इम प्रकार कठिन और दुष्कर तप करने में महाशतरु का शरीर अति कृश होगया । इमलिए मारगान्तिक मंलेखना कर धर्मध्यान में तल्लीन होगया । शुभ अध्यवसाय के कारण और अथवि ज्ञानावरण कर्म के क्षयोपशम में महाशतरु श्रावक की अथधिज्ञान उत्पन्न होगया । यह पूर्व जिशा में लवण समुद्र के अन्दर एक हजार योजन तक पानने और देखने लगा । इमी तरह दक्षिण और पश्चिम में भी लवण समुद्र में एक हजार योजन तक जानने और देखने लगा । उचार में चुल्लहिमयन्त पर्यंत तक जानने और देखने लगा । नीची दिशा में स्वप्रभा पृथ्वी में लोलुप-स्युत नरक तक जानने और

दखने लगा। इसी समय रेवती गाथापत्री कामोन्मत्त होकर पाँपध-  
शाला में आई और महाशतक श्रावक को कामभोगों के लिए  
ग्रामन्वित करने लगी। उसके दो तीन बार ऐसा कहने पर  
महाशतक श्रावक को क्रोध आगया। अधिज्ञान में उपयोग  
लगा कर उमने रेवती से कहा कि तू मात रात्रि के भीतर भीतर  
अलम (त्रिपूचिका) रोग में पीड़ित हो कर आर्चाध्यान करती हुई  
श्रममाप्तिमरण पूर्वक यथाममय काल करके रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे  
लोलुयच्युत नरक में ८४ हजार वर्ष की स्थिति से उत्पन्न होगी।

महाशतक श्रावक के इस कथन को सुन कर रेवती विचारने  
लगी कि महाशतक अत्र मुझ पर कुपित हो गया है और मेरा  
पुत्र चाहता है। न जाने यह मुझे किस तुरी मात से मरवा  
डालेगा। ऐसा मोच कर उठ उठी। चुन्ध और भयभीत होती  
हुड धीरे धीरे पीछे हट कर वह पाँपशाला से बाहर निकली।  
पर आकर उदामीन हो वह मोच म पड गई। तत्पश्चात् रेवती  
के शरीर में भयङ्कर अलम रोग उत्पन्न हुआ और तीव्र वेदना  
प्रकट हुई। आर्चाध्यान करती हुई यथाममय काल करके रत्नप्रभा  
पृथ्वी के लोलुयच्युत नरक में चौरासी हजार वर्ष की स्थिति  
वाले नैरयिकों में उत्पन्न हुई।

ग्रामानुग्राम विहार करते हुए श्रमण भगवान् महावीर स्वामी  
राजगृह नगर में पधारे। भगवान् अपने ज्येष्ठ शिष्य गाँतम  
स्वामी से कहने लगे कि राजगृह नगर में मेरा शिष्य महाशतक  
श्रावक पाँपधशाला में सलेखना कर बैठा हुआ है। उमने रेवती  
से सत्य किन्तु अप्रिय वचन कहे हैं। मक्त पान का पचकषाय  
कर मारणातिकी सलेखना करने वाले श्रावक को जो बात  
सत्य (तथ्य) हो किन्तु दूसरे को अनिष्ट, अकान्त, अप्रिय लगे  
ऐसा वचन बोलना नहीं कल्पता। अतः तुम जाओ और महाशतक

श्रावक से वही कि हम निपटरी की आलोचना कर यथायोग्य प्रायश्चित्त स्वीकार करें।

भगवान् ने उपरोक्त कथन की स्वीकार कर गौतम स्वामी महाशतक श्रावक के पाम पधार। श्रावक ने उन्हें वन्दना नमस्कार किया। बाद में गौतम स्वामी ने कथनानुसार भगवान् की आज्ञा गिरोधार्य कर आनीयना पूर्वक यथायोग्य दण्ड प्रायश्चित्त लिया।

महाशतक श्रावक ने बीस वर्ष पर्यन्त श्रावक पर्याय का पालन किया। अन्तिम समय में एक मर्दाने की सलेखना कर समाधि मरण पूर्वक काल कर माधर्म देखलोक के अस्थानतसक विमान में चार पल्लोपम की स्थिति वाला ट्रेन हुआ। वहाँ से चढ़ कर महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेगा और वहाँ से उमी भव में मोक्ष जायगा।

( ६ ) नन्दिनीपिता श्रावक-श्रावन्ती नगरी में चित्तशत्रु राजा राज्य करता था। उसी नगरी में नन्दिनीपिता नामक एक धनाढ्य गाथापति रहता था। उसके चार करोड़ मोनैया राजाने में, चार करोड़ व्यापार में और चार करोड़ विस्तार में लगे हुए थे। गाथा के चार गोकुल थे अर्थात् चालीस हजार गाथी थीं। उसकी धर्मपत्नी का नाम अश्विनी था।

एक समय श्रमण भगवान् महानगर स्वामी वहाँ पधार आनन्द श्रावक की तरह नन्दिनीपिता ने भी भगवान् के पा श्रावक के त्त अङ्गीकार किये और धर्मध्यान करते आनन्द पूर्वक रहने लगा।

श्रावक के त्त नियमों का भली प्रकार पालन करते नन्दिनीपिता को चौदह वर्ष बीत गये। जब पन्द्रहवां वर्ष रहा था तब ज्येष्ठ पुत्र को घर का भार सौंप दिया और स्वयं पीपधशाला में जाकर धर्मध्यान में तल्लीन रहने लगे।

तीस वर्ष तक श्रावक पर्याय का पालन कर अन्तिम समय में सलेखना की। समाधि मरण पूर्वक आयुष्य पूरा कर सौधर्म देवलोक के अरुणगण नामक विमान में उत्पन्न हुआ। चार पल्योपम की स्थिति पूरी करके महाविदेह क्षेत्र में उत्पन्न होकर सिद्धगति को प्राप्त होगा।

(१०) शालेयिकापिता श्रावक— श्रावस्ती नगरी में जितशत्रु राजा राज्य करता था। उसी नगरी में शालेयिकापिता नामक एक धनाढ्य गाथापति रहता था। उसके चार करोड़ सौनया खजाने में थे, चार करोड़ व्यापार में और चार करोड़ विस्तार में लगे हुए थे। गायों के चार गोकुल थे। उसकी पत्नी का नाम फाल्गुनी था।

एक समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी वहाँ पधारे। शालेयिकापिता ने आनन्द श्रावक की तरह भगवान् के पास श्रावक के त्त ग्रहण किये और धर्मध्यान पूर्वक समय बिताने लगा। चौदह वर्ष बीत जाने के पश्चात् अपने ज्येष्ठ पुत्र को घर का भार सम्भला कर पौषधगाला में जाकर धर्मध्यान में तल्लीन रहने लगा। तीस वर्ष तक श्रावक पर्याय का भली प्रकार पालन किया। अन्तिम समय में सलेखना कर के समाधि मरणा को प्राप्त हुआ। सौधर्म देवलोक के अरुणक्रील नामक विमान में देवरूप से उत्पन्न हुआ। चार पल्योपम की स्थिति पूर्ण करके महाविदेह क्षेत्र में जन्म लेगा और उमी भव में मोक्ष जायगा। शेष सारा अधिकार आनन्द श्रावक के समान हैं।

दसही श्रावकों ने चौदह वर्ष पूरे करके पन्द्रहवें वर्ष में कुडुम्भ का भार अपने अपने ज्येष्ठ पुत्र को सम्भला दिया और स्वयं विशेष धर्म साधना में लग गये। सभी ने बीस तीस वर्ष तक श्रावक पर्याय का पालन किया।



## परिशिष्ट

उपासक दशाग के छानन्दोध्यया में नीचे लिखा पाठ छाया है—“नो मनु मे भंत कपद् अन्नपमिद् अन्नउत्थि ए वा, अन्नउत्थिपदेवयाणि वा, अन्नउत्थियपरिगहियाणि वा यदिचाण वा नर्मसित्तण वा” इत्यादि ।

अथान्-ह मगवन्' मुझे आज मे लेकर अन्य यूथिक, अन्य यूथिक व इय अथवा अन्य यूथिक के द्वारा सम्मानित या गृहगत का बन्दना समारकार करना नहीं कल्पता । इस जगह तीन प्रकार के पाठ उपलब्ध होत हैं—

(क) अन्न उत्थिय परिगहियाणि ।

(ख) अन्नउत्थियपरिगहियाणि चइयाइ ।

(ग) अन्न उत्थिपरिगहियाणि अग्गित पेइयाइ ।

विवाद का विषय होने के कारण इस विषय में प्रति सवा पागे का सुलामा नीचे लिखे अनुसार है—

[क] 'अन्न उत्थियपरिगहियाणि' यह पाठ बिल्बोधिदा इण्डिया कलकत्ता द्वारा इ० मन् १८६० म प्रकाशित ग्रन्थ श्री अनुवादसहित उपासकदशाग सूत्र म है । इसका अनुवाद चार सशोधन इग्वर ०० पृ० ० इल्लह दामल पी एच० डा० ट्यूविजन् फलो श्राफ कलकत्ता युनिवर्सिटी सौनररी पब्लिशान्जिकस सेक्रेट्री टूनी एग्जिक्टिक सोसाइटी ऑफ बंगाल ने किया है । उन्होंने टिप्पणी में पांच प्रतिषों का उल्लेख किया है जिनका नाम A B C D और I रखा है । A B और D में (ख) पाठ है । C और F में (ग)

दानल साहब ने 'चइयाइ' और 'अग्गितचइयाइ' दोनों प्रकार के पाठ का प्रसिद्ध माना है । उनका कहना है— 'द्वयाणि' और 'परिगहियाणि' पदों में सूत्रकार ने द्वितीया के बहुवचन में 'णि' प्रत्यय लगाया है । 'चइयाइ' में 'इ' होने से मालूम पड़ता है कि यह शब्द बाद में किसी दूसरे का डाला हुआ है । दानले साहब ने पांचों प्रतिषों का परिचय इस प्रकार दिया है—

(A) यह प्रति इण्डिया आशिम लाइब्रेरी कलकत्ते में है । इसमें ४० पन्ने हैं प्रत्येक पन्ने में १० पंक्तियाँ और प्रत्येक पंक्ति में ३८ अक्षर हैं । इस पर सम्बन्ध १२६४ सावन सुदा १४ का समय दिया हुआ है । प्रति प्राय शुद्ध है ।

(B) यह प्रति बंगाल एग्जिक्टिक सोसाइटी की लाइब्रेरी में है । धीकानेर महाराजा के भण्डार में रखी हुई पुरानी प्रति की यह नकल है । यह नकल सोसाइटी ने गवर्नमण्ट ऑफ इण्डिया के बीच में पदन पर की थी । सोसाइटी जिस प्रति की नकल करवाना चाहती था भारत सरकार द्वारा प्रकाशित धीकानेर भण्डार की

सूची में उसका १२३३ नम्बर है। सूची में उसका समय १११७ तथा उस के साथ उपासकदशाविवरण नाम की टीका का होना भी बताया गया है। सोसाइटी की प्रति पर फागुन सुदी २, शुक्रवार स० १८२४ दिया हुआ है। इस में कोई टीका भी नहीं है। केवल गुजराती टब्बा अर्थ है। उस प्रति का प्रथम और अंतिम पत्र बीच की पुस्तक के साथ मेल नहीं खाता। अंतिम पृष्ठ टीका वाली प्रति का है। सूची में दिया गया विवरण इन पृष्ठों में मिलता है। इस से मालूम पड़ता है कि सोसाइटी के लिए किसी दूसरी प्रति की नकल हुई है। १११७ सम्वत् उस प्रति के लिखने का नहीं किन्तु टीका के बनाने का मालूम पड़ता है। यह प्रति बहुत सुन्दर लिखी हुई है। इसमें ८३ पाने हैं। प्रत्येक पाने में छ पक्तियाँ और प्रत्येक पक्ति में २८ अक्षर हैं। साथ में टब्बा है।

(C) यह प्रति कलकत्ते में एक पति के पास है। इसमें ४१ पाने हैं। मूल पाठ बीच में लिखा हुआ है और संस्कृत टीका उपर तथा नीचे। इसमें सम्वत् १२१६ फागुन सुदी ४ दिया हुआ है। यह प्रति शुद्ध और किसी विद्वान् द्वारा लिखी हुई मालूम पड़ती है अत में बताया गया है कि इस में ८१२ श्लोक मूल के और १०१६ टीका के हैं।

(D) यह भी उन्हीं पतिजी के पास है। इसमें ३३ पाने हैं। ३ पक्ति और ४८ अक्षर हैं इस पर मिगसर बदी २, शुक्रवार सम्वत् १७४२ दिया हुआ है। इसमें टब्बा है। यह श्री रेनी नगर में लिखी गई है।

(E) यह प्रति मुर्शिदाबाद वाले राय धनपतिसिंहजी द्वारा प्रकाशित है। इनके सिखाय श्री अनूप संस्कृत छात्रमोरी, बीकानेर, (बीकानेर का प्राचीन पुस्तक भण्डार जो कि पुराने किले में है) में उपासक दशांग की दो प्रतिपा हैं। उन दोनों में 'अन्न उत्थियपरिगहियाणि चेइयाई' पाठ है। पुस्तकों का परिचय F और G के नाम से नीचे दिया जाता है—

(F) छात्रमोरी पुस्तक न० ६४६७ (उपासक सूत्र) पाने २४, एक पृष्ठ में १३ पक्तियाँ, एक पक्ति में ४२ अक्षर, अहमदाबाद आचल गण्ड श्री गुडापारवैनाथ की प्रति पुस्तक में सम्वत् नहीं है। चौथे पत्र में नीचे लिखा पाठ है अन्न उत्थियपरिगहियाणि वा चेइयाइ। पत्र के बाईं तरफ शुद्ध किया हुआ है अन्न उत्थियाड वा अन्न उत्थियदेवयाइ वा पुस्तक अधिकतर अशुद्ध है। बाद में शुद्ध की गई है श्लोक संख्या ६१२ दी है।

(G) छात्रमोरी पुस्तक नं० ६४६४ (उपासकदशावृत्ति पत्र पाठ सह) पत्र ३३, श्लोक ३००, टीका प्रत्याप्त ६००, प्रत्येक पृष्ठ पर १६ पक्तियाँ और प्रत्येक पक्ति में ३२ अक्षर हैं। पत्र छाठवें पक्ति पहली में नीचे लिखा पाठ है—

अन्न उत्थियपरिगहियाणि वा चेइयाई। यह पुस्तक पढिमात्रा में लिखी गई है और अधिक प्राचीन मालूम पड़ती है। पुस्तक पर सम्वत् नहीं है।

## परिशिष्ट

उपासक दशम के आनन्द-अध्यायन में नीचे लिख्य पाठ थाया ह—“नो स्तु  
मे भते कण्व अज्जपभिद् अत्रउत्थिए वा, अत्रउत्थिएदेवयाणि वा,  
अत्रउत्थियपरिग्गहियाणि वा वदिताण वा नमसिस्तण वा” इत्यादि ।

अथान्—हं भगवन् ! मुक्त आच मे खवर अन्य यूथिक, अन्य यूथिक के दव  
अथवा अन्य यूथिक के द्वारा सम्मानित या गृहीत को वन्दना नमाकार करना  
नही करणता । इस जगद तीन प्रकार के पाठ उपलब्ध होते हैं—

(क) अज्ज उत्थिय परिग्गहियाणि ।

(ख) अत्रउत्थियपरिग्गहियाणि चेइयाइ ।

(ग) अत्र उत्थियपरिग्गहियाणि अरिहत्त चेइयाइ ।

विवाद का विषय होने के कारण इस विषय में प्रति तथा पाठों का  
सुलामा नीचे लिखे अनुसार है—

[क] ‘अज्ज उत्थियपरिग्गहियाणि’ यह पाठ सि-ल्लोथिका इण्डिया,  
कलकत्ता द्वारा इ० सन् १८६० में प्रकाशित अग्ने जी अनुवादसहित उपासकदशम  
सूत्र में है। इसका अनुवाद और सशोधन शवटर ए० एफ० इरुफ हानल पी-एच०  
डा० ट्यूथिन, पेनो ग्राम कलकत्ता युनिवर्सिटी ऑनररी प्राइविलेजियर  
सत्रे दो दूरी एंसेन्थेटिक सोसाइटी ऑफ बंगाल ने किया है। उन्होंने टिप्पणी में  
पाच गतियों का उल्लेख किया है जिनका नाम A B C D और E रक्ता है।  
A B और D में (ख) पाठ है। C और E में (ग)

हानल साहय ने ‘चेइयाइ’ और ‘अरिहत्तचेइयाइ’ दोनों प्रकार के पाठ को  
प्रक्षिप्त माना है। उनका कहना है— ‘देवयाणि’ और ‘परिग्गहियाणि’ पदों में  
सूत्रकार ने द्वितीया के बहुवचन में ‘णि’ प्रत्यय लगाया है। ‘चेइयाइ’ में ‘इ’ हाने  
से मालूम पता है कि यह शब्द बाद में किसी दूसरे का डाला हुआ है। हानल  
साहय ने पाया प्रतिया का परिचय इस प्रकार दिख है—

(A) यह प्रति इण्डिया आफिस लाइब्रेरी कलकत्ते में है। इसमें ४० पन्ने हैं  
प्रत्येक पन्ने में १० पक्तियाँ और प्रत्येक पन्ने में ३८ अक्षर हैं। इस पर सन् १९६४,  
भावन सुदा १४ का समय दिया हुआ है। प्रति प्राय शुद्ध है।

(B) यह प्रति बंगाल एंसेन्थेटिक सोसाइटी की लाइब्रेरी में है। बीकानेर  
महाराजा क भण्डार में रक्वी हुई पुरानी प्रति की यह नकल है। यह नकल सोसा  
इटी ने रचनमण्ट ग्राम इण्डिया के बीच में पदने पर की थी। सोसाइटी जिस प्रति  
का नकल करवाना चाहती थी भारत सरकार द्वारा प्रकाशित बीकानेर भण्डार की

सूची में उसका १२३३ नम्बर है। सूची में उसका समय १११७ तथा उस के साथ उपासकदशाविवरण नाम की टीका का होना भी बताया गया है। सोसाइटी की प्रति पर फागुन सुदी ६, गुरुवार स० १८२४ दिया हुआ है। इस में कोई टीका भी नहीं है। केवल गुजराती टक्का अर्थ है। उस प्रति का प्रथम और अंतिम पत्र बीच की पुस्तक के माध मेल नहीं खाना। अंतिम पृष्ठ टीका बाकी प्रति का है। सूची में दिया गया विवरण इन पृष्ठों में मिलता है। इस से मालूम पड़ता है कि सोसाइटी के सिप किसी दूसरी प्रति की तकल हुई है। १११७ सम्वत् उस प्रति के लिखने का नहीं किन्तु टीका के बनाने का मालूम पड़ता है। यह प्रति बहुत सुन्दर लिखी हुई है। इसमें ८३ पन्ने हैं। प्रत्येक पन्ने में छ पक्तियाँ और प्रत्येक पक्ति में २८ अक्षर हैं। साथ में टक्का है।

(C) यह प्रति कलकत्ते में एक यति के पास है। इसमें ४१ पन्ने हैं। मूल पाठ बीच में लिखा हुआ है और ससृष्ट टीका ऊपर तथा नीचे। इसमें सम्वत् १६१६ फागुन सुदी ४ दिया हुआ है। यह प्रति शुद्ध और किसी विद्वान् द्वारा लिखी हुई मालूम पड़ती है अत में बताया गया है कि इस में ८१२ श्लोक मूल के और १०१६ टीका के हैं।

(D) यह भी उन्हीं यतिजी के पास है। इसमें ३३ पन्ने हैं। ६ पक्ति और ४८ अक्षर हैं इस पर मिगसर बदी २, शुक्रवार सम्वत् १७४२ दिया हुआ है। इसमें टक्का है। यह श्री रेनी नगर में लिखी गई है।

(E) यह प्रति मुर्शिदाबाद वाले राय घनपतिसिंहजी द्वारा प्रकाशित है।

इनके सिवाय भी अनूप ससृष्ट छाहमेरी, बीकानेर, (बीकानेर का प्राचीन पुस्तक मयदार जो कि पुराने किले में है) में उपासक दशांग की दो प्रतियाँ हैं। उन दोनों में 'अन्नउत्थिपरिगहियाण चेहयाह' पाठ है। पुस्तकों का परिषय F और G के नाम से भीचे दिया जाता है—

(F) छाहमेरी पुस्तक न० ६४६७ (उपासक सूत्र) पन्ने २४, एक पृष्ठ में १३ पक्तियाँ, एक पक्ति में ४२ अक्षर, अहमदाबाद आच्छल राव्लु श्री गुदापारवभाष की प्रति पुस्तक में सबत् नहीं है। चौथे पत्र में नीचे लिखा पाठ है अन्न उत्थियपरिगहियाह वा चेहयाह। पत्र के बाह्यतरफ शुद्ध किया हुआ है अन्नउत्थियाह वा अन्नउत्थियदवयाह वा पुस्तक अधिकतर अशुद्ध है। बाद में शुद्ध की गई है श्लोक सख्या ६१२ दी है।

(G) छाहमेरी पुस्तक न० ६४६४ (उपासकदशावृत्ति पंच पाठ सह) पत्र ३३, श्लोक ६००, टीका ग्रन्थाम ६००, प्रत्येक पृष्ठ पर १६ पक्तियाँ और प्रत्येक पक्ति में ३२ अक्षर हैं। पत्र आठवें पक्ति पहली में नीचे लिखा पाठ है—

अन्न उत्थियपरिगहियाह वा चेहयाह। यह पुस्तक पश्चिमात्र में लिखी गई है और अधिक प्राचीन मालूम पड़ती है। पुस्तक पर सम्वत्